त्रैमासिक

चन्द्रताल

चतुर्थ-पंचम अंक

देवताओं का वृक्ष

लाहुल-स्पिति की साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका

रू० 15-00

अप्रैल-सितम्बर 1995

फोटो फीचर

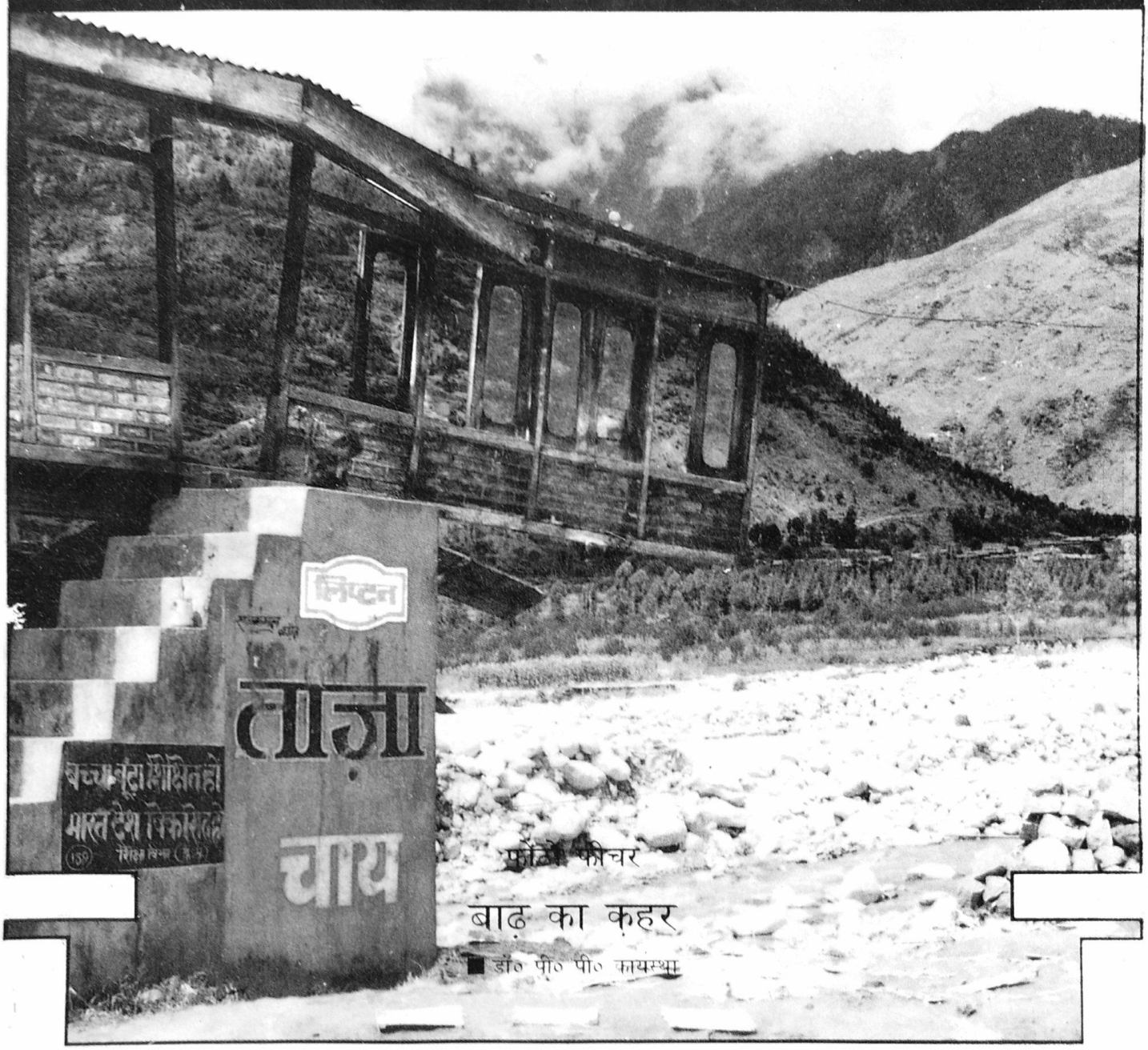

बाढ़ का कहर

■ डॉ० पी० पी० कायस्था

1995

संस्थापक
स्वंगला एरतोग
लाहुल-स्पिति कला व संस्कृति उत्थान हेतू
सोसाईटी (रजि०) संख्या ल स/42 / 93
सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट 21,1860.

मुख्य संपादक
सुश्री डा० छिमे शाशनी

उप संपादक
बलदेव कृष्ण घरसंगी

संपादक मण्डल
के० अंगरूप लाहुली
आचार्य प्रेम सिंह,

सम्पर्क
मुख्य संपादक-चन्द्रताल

पोस्ट बाक्स 25, मुख्य डाक घर ढालपुर
कुल्लू-175101 (हि० प्र०) फोन न० 4986

वितरण प्रबन्धक:
रणवीर चन्द ठाकुर 19, फैशन सैन्टर मॉडल
टाउन मनाली -175131 (हि० प्र०)

चन्द्रताल त्रैमासिक सहयोग राशि
वार्षिक : पचास रूपये
एक प्रति : पन्द्रह रूपये

पत्रिका पूर्णत: अव्यवसायिक तथा संपादन
व प्रबन्धन अवैतनिक

प्रकाशक एवं मुद्रक
स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिए सतीश कुमार लोप्पा द्वारा मॉड्रन स्टेशनर्ज दुकान न० ५, शंकन गार्डन, मण्डी द्वारा लेज़र टाईप सैटिंग व मुद्रित

रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, उनमें संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं

आवरण फोटो व लेआऊट : बलदेव घरसंगी

क्रम

1. संपादकीय
2. पाठकीय

कविता

4. स्वार्थ — निवेदिता
4. फिर भी मुस्कराती हो तुम — शकुन्तला लोप्पा 'शकुन'
4. मौत — सरला
5. एक दीप जल उठा — निर्मला वैद
5. बचपन — आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा

कहानी

6. कैसे-कैसे दर्द — शकुन्तला लोप्पा 'शकुन'

इतिहास प्रसंग

8. खल्त्से एपीसोड — बलदेव घरसंगी
11. क्षेत्रीय दृष्टि

लोक गाथा

13. नन्दी द्वारा तन्त्रानुष्ठान — सतीश कुमार लोप्पा

पर्यावरण

15. दवताओ का वृक्ष 'शुर' — सानम अगरूप

लोक संगीत

16. लाहौल जनपद के लोक संगीत में राग छाया — डॉ सूरत राम ठाकुर
21. कसौटी

स्वास्थ्य सेवाएं

25. तिब्बती चिकित्सा पद्धति-एक सर्वेक्षण — डॉ रनधीर सिंह मनेपा

लोक साहित्य

28. बिम-श्ची (पहेलियां) — आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा
30. गुरू घंटाल गोम्पा — छिमे अंगमो साहनी

बहस

31. लाहौल का क्या होगा? — सरला
33. लाहौल की भौगोलिक स्थिति अभिशाप या वरदान — विनिता ठाकुर
34. महापण्डित राहुल सांस्कृत्यायन — शिव चन्द ठाकुर
37. एरतोकि खबर-रे

संस्मरण

संपादकीय

चन्द्रताल का इस वर्ष का अग्रिम और अगले वर्ष का प्रथम अंक संयुक्तांक रुप में आप सभी पाठकों के सम्मुख उपस्थित किया जा रहा है। इस के साथ ही 'स्वंगला एरतोग' अपने अस्तित्व के दो वर्ष पूरे कर चुकी है और आप की प्रिय पत्रिका चन्द्रताल भी एक वर्ष की। चन्द्रताल के प्रकाशन से न सिर्फ संस्था के विचारों का सम्प्रेषण एंव जनमत की प्रतिक्रिया का आकलन सम्भव हो पाया है, अपितु एक साहित्यिक माहौल आप जनता में कायम करने की दिशा में भी बड़ी मदद मिली है। इस से साहित्यिक रूचियों का विकास व सृजन के प्रति रूझान सम्भव हो पाया है। इसके साथ ही लुप्त हो रही सांस्कृतिक विरासत को संजोने संकलित करने, उन्हें प्रकाश में लाने, पुनर्जीवित व संवर्धित करने तथा लोगों में उन के प्रति चेतना लाने की दिशा में हम प्रयासरत हैं। अनेक ऐसी विधाओं को चिहिन्त किया जा रहा है। जो लुप्त होने के कगार पर हैं यथा लोक गाथा, लोक संगीत (गेय एंव वाद्य), लोक नृत्य, लोक कला, लोक नाट्य, लोकोक्तियां, पहेलियां, लोक साहित्य इत्यादि।

'चन्द्रताल' जो जनसामान्य तथा संस्था के मध्य वैचारिक सेतु का कार्य कर रही है, को और मजबूती देने के लिए विशेष पग उठाये जा रहे हैं। अनेक लेखकों से व्यक्तिगत स्तर पर सम्पर्क कर के प्रकाश्य सामग्री प्राप्त करने की प्रक्रिया जारी है ताकि पत्रिका के स्तर में सतत सुधार किया जा सके। पाठकगण के पत्र हमारे इस कार्य को गति प्रदान करने वाले बूस्टरों का काम कर रहे हैं। इस बात का हमें खेद है कि पत्रिका के प्रकाशन में एक नियत समयावधि के विलम्ब को हम पाट नहीं पाये हैं। इस के मूल में प्रथम प्रकाश्य सामग्री की कमी व दूसरा प्रकाशन से सम्बन्धित कार्य की सुविधा मण्डी और दिल्ली में होना है। लेकिन हमारे लिए सब से उत्साहवर्धक व प्रसन्नता की बात यह है कि पाठकगण हम से निराश नहीं है, उन का दृष्टिकोण 'चन्द्रताल' के सम्बन्ध में हम ने सकारात्मक पाया है, यही हमारी सब से बड़ी पूंजी है। इसी से प्रेरणा लेकर पत्रिका को स्तर पर ले जाने के लिए वचनबद्ध हैं।

चन्द्रताल भविष्य में आपको उच्च स्तर के कागज़ पर, रंगीन चित्रों से सुसज्जित और कम दाम पर मिले इसके लिए यह आवश्यक है कि इसका प्रसार बढ़े। यह तभी संभव है जब इसे अधिक से अधिक लोग इसको नियमित रूप से ग्राहक बन कर पढ़ेंगें। हमें पूर्ण विश्वास है कि आप इसके लिए अपना भरपूर योगदान देंगें।

वर्षों के चिन्तन, मन्थन के पश्चात् जन-जातीय जीवन के अनछुए पहलुओं को कुरेदता 'चन्द्रताल' पत्रिका का द्वितीय संस्करण मिला। यह लिखना कतई अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं होगा कि पत्रिका उत्तरोत्तर अधिक सौद्देश्यपूर्ण एवं समसामयिक विषयों को प्रस्तुत करने में सफल हो रही है। नकदी फसल आलू, हॉप्स और मटर ने जिस प्रकार विकट परिस्थितियों में लाहौल वासियों को जो आर्थिक संरक्षण प्रदान किया, आज इन्हीं फसलों के प्रबन्धन, विधायन एवं विपणन में घोर कार्य अक्षमता का बोलबाला हो गया है। आलू और हॉप्स सोसाईटी से सम्बन्द्ध तमाम प्रबुद्ध सदस्यगण समय रहते यदि इस पर विचार नहीं करेंगे, तो संदर्भित सोसाईटीज़ का नामोनिशान मिट सकता है।

पत्रिका अधिक वैविध्यपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक हो, इसके लिए विभिन्न विषयों, विभिन्न पहलुओं को पत्रिका में समुचित जगह मिलनी चाहिए। लाहौल में संयुक्त-परिवार टूट रहे हैं। सरकारी नौकरी पेशा व्यक्ति का क्षेत्र की समस्याओं से मानो कोई सरोकार नहीं रह गया है। दहेज प्रथा का प्रचलन निरन्तर बिद्रूप शक्ल लेता जा रहा है। हम लोग अप्रत्याशित तरीके से आधुनिकता के अंधदौड़ में शामिल हो गये हैं। एवं हमारी लोक-कला, लोक-संस्कृति विलुप्त होती जा रही है। अतः सुधि पाठकों से उम्मीद की जाती है कि उपरोक्त विषयों पर लिखकर समाज को सुसंगठित, सुरक्षित बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दें।

पत्रिका की सफलता एवं वृद्धि हेतु कोटिशः मंगल कामनाएं!

शेर सिंह वैद

इलाहाबाद बैंक, वाराणसी।

मैं चन्द्रताल के दोनों अंक पढ़ चुका हूं। आप सभी चन्द्रताल से जुड़े कर्मियों को मेरी ओर से बधाई व शुभकामनाएं। पहले अंक में, निस्संदेह कई लेख, अत्यंत रुचिकर थे जैसे 'सर्दियों की सुबह' 'कहां खो गए सब फूल' तथा 'लाहौल अतीत के झरोखे से' 'लाहुल में संयुक्त परिवार की ढहती दीवारें' तथा 'पर्यावरण' सम्बन्धी लेख' आदि ज्ञान शावला द्वारा रचित छोटी सी कविता 'कामना' मुझे प्रिय लगी। इसी तरह 'फिन्च दक्षिण की ओर उड़ गई' कर्नल प्रेमचन्द का अंतर्द्वन्द्व, उनका संस्मरण अत्यन्त ही रोचक है। वस्तुतः 'एवरेस्ट' मन के भीतर भी है। जिसे उन्होंने स्केल किया। अपनी ख्याति की परवाह न करते हुए अपनी टीम का सही-२ नेतृत्व कर, उन्हें ख्याति अर्जन का मौका देना सचमुच महान व्यक्तिगत सफलता है। उन्हें बार-२ बधाई।

दूसरा अंक, पहले अंक से भी ज़्यादा रोचक पाया। इस अंक में सम्पादकीय भी नपे तुले शब्दों में, कविताएं, सीधी सपाट भाषा में, क्षेत्रीय दृष्टि में संक्षिप्त किंतु खट्टी-मिट्ठी बयानी, कसौटी में दो लेख, जैसे एक प्रणाली का सृजन-इस लेख में दो शब्द अखरे। वे हैं- हॉप्स को 'औद्योगिक उत्पाद' लिखना, वास्तव में यहां होना चाहिए था 'कृषि उत्पाद' और 'औद्योगिक कच्चा माल' क्योंकि हॉप्स 'औद्योगिक उत्पाद नहीं है। दूसरे लेख में अर्थात् 'सफलता की राह' में पहले वाक्य में 'ढेर सारा विद्युत' की जगह पर्याप्त लिखते तथा अंत में 'पर्यावरण दोस्त' शब्दों की जगह 'पर्यावरण हितैषी' लिखते तो शायद अच्छा लगता। इन दोनों लेखों में मुझे एक नई सोच देने की बात नज़र आती है। यह एक सराहनीय कदम है।

दो चेयरमैनों से भेंटवार्ता भी रोचक बन पड़ा है। शेरसिंह द्वारा 'रोहतांग दर्रे पर तेंतीस घण्टे का संघर्ष' पठनीय है। यह संघर्ष उनके दमखम और साहस तथा धैर्य का परिचायक है। यह जो गुण है, विशिष्ट लाहुलियों में पाया जाता है।

लोकगाथाओं में 'घुरे या यर गीत' पर लिखना लोप्पा द्वारा अत्यंत ही सराहनीय प्रयास है। हम लोग तो लाहुल में ही रहते हैं; किंतु कुल्लू-मनाली रहकर, अपनी घाटी के लोकगीतों तथा यरगीतों का ख्याल करना, उसे छापना प्रशंसनीय है, जहां हमें लोकगीत या घुरे याद तक नहीं है।

'योर' से सम्बन्धित लेख तो बहुत ही विस्तृत व शोधपूर्ण है। निश्चय ही आचार्य जी इसके लिए बधाई के पात्र हैं।

रणवीर सिंह, लोट।

मैं आप की अत्याधिक सुन्दर पत्रिका की ओर आकृष्ट हुआ, जब मैंने इस का दूसरा अंक पढ़ा। आज बाज़ार में जितनी भी पत्रिकाएं उपलब्ध हैं, मुझे उन में 'चन्द्रताल' ही सब से प्रिय है। मेरे विचार में हमारी संस्कृति और इतिहास के बारे में जानने के लिए यह एक पूर्ण व उत्तम पत्रिका है। यह उन लाहुलियों के लिए जो अपनी संस्कृति से दूर हैं या दूर जा रहे हैं, एक अच्छा मार्ग दर्शक बन सकती है। सिर्फ यही पत्रिका है जो तथ्यों में सामन्जस्य पैदा कर उन्हें सही रूप में पेश करने में सक्षम है। "रोहतांग में तेंतीस घण्टे" लेख से मैं बहुत प्रभावित हुआ हूं। इस के अलावा लाहुल की संस्कृति पर चर्चा वाले विषय भी काफी अच्छे लगे। मुझे आशा है कि यह पत्रिका जिस ने लाहुल की साहित्यिक व सांस्कृतिक उत्थान का बीड़ा उठाया है, हमेशा नैतिक व उच्च स्तरीय विषयों को छापेगी। इतनी अच्छी व विविधतापूर्ण पत्रिका छापने के लिए, कृपया मेरा अभिनंदन स्वीकार करें। मैं इस के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

विनोद कुमार 'शूडपा'

बी०ए० प्रथम वर्ष, रा० महाविद्यालय, कुल्लू।

"सर्दियों में लाहौल घाटी"

मौसम की पहली बर्फ अपने कोमल अछूते स्पर्श से धरती के घावों को भर देती है तब हर मार्ग हो जाता है बन्द, समतल अचिहिन्त और स्वच्छ हवा खेतों से फसल काटे जाने के सभी निशानों को बर्फ से ढक देती है। पहाड़ों के शिखर संवर जाते हैं ।

हमारे लक्ष्यों की पैनेपन को ढक, शांति की उद्धारक अनूभति जगाती है। जिस से पूरे वर्ष के कठिन संघर्ष के बाद हम एक नए सिरे से अंतर्मुखी हो कर अपने परिवार के आंचल की सुखद उष्मा का आनन्द ले सके। ऐसे क्षणों में हम अपने घर के सुरक्षित आश्रम में बन्द गर्म कपड़ों में लिपटे जलते तन्दूर (चुल्हा) के इर्द-गिर्द बैठ कर प्रकृति के हर रुप को याद करते है।

पेड़ों की शाखाओं को देख कर उसके मीठी-२ खुशबू भरे हरे पत्तों को भूल जाते हैं खिड़की से बाहर दिखती बर्फ की स्फुटिक संरचना को हम सराह उठते हैं और उन बहादूर और धैर्यवान पेड़ों पत्तों की शाल के बिना झुक-२ कर बर्फीली हवाओं का सामना करते देखते हैं।

बर्फ के परिवेश में वस्तुओं की आकृति परिवार और दैनिक कार्य सब कुछ अलग-थलग सा दिखने लगता है।

बर्फ के पड़ने से पहले ही सर्दियां लाहौल घाटी को बदल देती है बाग को बर्फीली नींद में सोते देखना बैली के पेड़ की आखरी पत्तों को हवा में कांपते देख कर परिवर्तन की प्रतीति गहराती है।

रात का आकाश सर्द और निर्मल हो जाता है। और तारे सपनों में देखे सांपों की तरह चमकते हैं। पहाड़ियां भूरे और स्लेटी वस्त्र पहन लेती हैं। गहरे काले बादल पहाड़ी के शिखर को ढांप लेती है।

ठंडी हवा के झरोखे घर भर में चूहे की तरह उछल-कूद मचाते हैं। और फिर बर्फ गिरते ही समूचा लाहौल घाटी बदल जाती है। और दूसरे इलाकों से कट सा जाता है। जब सर्दी बर्फ को सडकों पर जमा देती है और आने-जाने का साधन नहीं रहता तब हम तन्दूर (चुल्हा) के चटखते शोलों की गर्मी में घर में दुबक जाते हैं।

लकड़ियों का अंबार और खाद्य पदार्थों के भण्डार हमें आश्वस्त करते हैं कि हम अपने सपने पूरे कर सकते हैं। और सर्दियों की लम्बी राते हमें सपने देखने का लम्बा एंकात दे देती है।

सतीश कुमार शाशनी

गांव डा० तान्दी लाहौल।

***

कालचक्र आयोजन पर एक गीत

लाहौल घाटी की यह दिलकश वादी

पास में बह रही कल-कल यह भागा नदी

ऊंचे-ऊंचे पर्वत हैं लुभावनी

इन सबके बीच हैं यह 'फोटंग' मनमोहनी सी

'फोटंग' में परम-पावन जी के

दर्शन से मन भर आया

साक्षात अवलोकिश्वर को जब सामने पाया तो लगा बरसों बाद जीवन का

वह महान पल आया

परम-पावन जी का आगमन हम सबका अहोभाग्य है

उनके द्वारा सम्बोधन हम सब का भाग्योदय है।

हम हजार नर आपके धन्य-धन्य हैं

आपके दर्शनों के लिए तो तन-मन-धन नगण्य है।

कालचक्र प्रबन्धन समिति का मेहनत रंग लाया

लाखों श्रद्धालुओं का श्रद्धा काम आया

हम सभी कालचक्र अधिषेक से अभिपिक्त हुए

जैसे जन्मों-जन्मों के लिए दुखों से मुक्त हुए

लाहौल वासियों का सहयोग याद रहेगा

ऐसा संगम बार-बार हो

हर दिल में यह तमन्ना रहेगा।

छिमे दोरजे, स्पीति

स्वार्थ

स्वार्थों से भरी यह दुनियां,
सब है अपने गरज़ के साथी।
मुंह में मीठी ज़बान मन में कड़वाहट,
जब आती है ऐसे लोगों की आहट,
शुरु हो जाती है कंपकपाहट।
जब देखती हूं उन की मुस्कुराहट,
हो जाता है मन कसैला।
क्या कर्म ही है इन का छल?
स्वार्थ के वक्त एक सरलता,
बातों में दूध की तरलता
नहीं होता है विश्वास
कि
होते हैं जग में ऐसे भी'
जिन्हें हैं प्रिय मात्र स्वार्थ,
कोसों दूर है जिनसे परमार्थ।

-निवेदिता

"फिर भी मुस्कराती हो तुम"

अकेली, आहत, क्लांत
कितनी खामोश, कितनी उदास
फिर भी मुस्कराती हो तुम।।
आशाओं और निराशाओं के
भंवर में फंसी
तुम्हारी, यह ज़िंदगी
डगमगाते कदमों को
सम्भालने की
नाकाम सी कोशिश
एक कशमकश
एक दर्द का गुबार
अपने सीने में छुपाए
फिर भी मुस्कराती हो तुम।।
तुम्हारी मधुर खिलखिलाहट
आकृष्ट करती है मुझे
पल-पल तुम्हारी ओर
मगर तुम्हारी उन्मुक्त
हंसी में, छुपी है
कितनी मार्मिक आहें
कितना करुण क्रन्दन
विश्वास नहीं होता
अपने ज़ख्मों को
गहराईयों में छुपाए
फिर भी मुस्कराती हो तुम।।
अकेली, आहत, क्लांत
कितनी खामोश, कितनी उदास
फिर भी मुस्कराती हो तुम।।

शकुन्तला लोप्पा "शकुन"

मौत

अश्रुधारा गालों को नम करती
बह चली,
सावन की बौछार बन
बरस पड़ी।
दिल जैसे फट पड़ेगा
अभी - इसी वक्त,
यह बोझ जैसे प्राण ले लेगा।
मौत तुम इतनी भयावह
क्यों हो?
मैं रोई, बहुत रोई
पर वे हंसे।
आप को विश्वास न होगा
वे हंसें!!!
सब काम पूर्ववत चला,
बिना दु:ख व सन्ताप के ।
और यह सच है कि
मौत आई थी।
अन्तर केवल इतना सा था
कि मौत एक बिल्ली को आई थी।

-सरला

एक दीप जल उठा

प्रतीक्षा थी,
अन्धकार था,
हम कौन हैं?
कहां जा रहे हैं?
रास्ता नहीं सूझता था।
तभी एक दीप जल उठा।
कोमल,
सुन्दर,
फूल सा चेहरा,
महक चहुं ओर बिखेरता,
सबको ज्ञान का प्रकाश देता।
'चन्द्रभागा' की संस्कृति,
से उपजा यह 'चन्द्रताल'
'लोक्सा' 'चंग्सा', 'गारी', तोद्पा
की जीवन गाथा सुनाने।
संघर्ष की इस बेटी को,
'राजा घेपन' का आशीष प्राप्त है।
हमारे अरमानों की प्रतीक बन,
हमारी जीवन-गाथा सुनाने आई है।

-निर्मला वेद
जाहलमा

बचपन

पुचकारता था हर कोई
आंखों में मेरी देखकर
भोलापन बच्चों का
विमल कोमल कमल सा
लपक कर मैं हाथ
बढ़ाता था उधर ही
समझ कर सभी को
ममतामयी माता सा
घुटनों के बल पर
टेकने के कुछ देर बाद
घर का बाहर का भेद
समझ पाया अपनों के बाद
झिझक मिटती थी
अभ्यास के बाद परायों से
फिर अपनापन था
अपने के बाद परायों से
देहलीज से ज्यों ही
कदम अन्दर बाहर फिरा
त्यों ही अन्दर से भी
अच्छा साथी बाहर मिला
किलकारियों से आंगन
भर जाता था बेतरतीब
कदमों मे दौड़ते हुए
कभी गिरते कभी उठते
नन्द बाबा के आंगन में
यशोदा मां ने अनेंको बार
निरखी थी आनन्द विभोर
हो, खेल यह बारम्बार
आज की मां भी नहीं
समझती है अपने को कम
आधुनिका बनने की अगर
दम भरती नहीं है हरदम
धीरे से कदमों ने नापा
आंगन से दूरी बागों तक
नज़रें दौड़ने लगी नीचे
से वृक्षों के फल पत्तों तक
चढ़ने की चाह में कुछ
लटक जाते थे नीची डाली में
लटके पैरों को उठाने हेतु
सहारा देते थे बालसखा अन्य
शक्ति,युक्ति बटोर कर भी
विफल रह जाते थे जब
आरोहण के अभियान में
खीज कर पत्थर फैंकते थे तब।

आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा

कैसे कैसे दर्द

शकुंतला लोप्पा 'शकुन'

कक्षा समाप्त हो चुकी थी। सभी छात्र व छात्राएं एक-एक कर कक्षा से बाहर जा रहे थे लेकिन सौरभ अपने ख्यालों में खोया चुपचाप खिड़की से बाहर ताक रहा था। उसके चेहरे पर उदासी की झलक, शालू की नज़रों से छुपी नही रह सकी। शालू के कदम दरवाज़े पर ही ठिठक गए और वह उसे कोने की तरफ बढ़ गई जहां, सौरभ अकेला बैठा हुआ था

"क्या बात है, सौरभ? इस तरह अकेले क्यों बैठे हो? तुम्हारे सारे दोस्त तो चले गए हैं।'' शालू ने एक साथ कई सवाल पूछ डाले।

सौरभ एकाएक किसी सवाल का जबाव नही दे पाया। पिछले दो सालों से एक साथ पढ़ते हुए शालू ने कई बार महसूस किया था कि शायद उसकी भांति उदास रहता है। उसने महसूस किया था कि शायद उसकी और सौरभ की उदासी की वजह एक है लेकिन इस विषय पर उन्होंने कभी बात नहीं की थी। आज यह पहला मौका था जब वह एक दूसरे से वे इस तरह बात कर रहे थे।

सौरभ को खामोश देखकर शालू ने पुनः कहा, "कौन सी ऐसी बात है जो तुम्हे अन्दर ही अन्दर कचोटती रहती है? जिसे तुम किसी से बांटना चाहते हो लेकिन तुम्हे लगता है कि कोई तुम्हारे दर्द को समझ नहीं पाएगा और फिर तुम अन्दर ही अन्दर घुटते रहते हो।'' "हां शालू मुझे लगता है जैसे हमारा आरक्षित वर्ग में होना ही हमारे लिए एक अभिशाप बन गया है।'' शालू ने जैसे उसकी दुःखती रग पर हाथ रख दिया था।

"तुम भी आरक्षित वर्ग से हो और मैं भी। तुमने भी महसूस किया होगा कि लोगों के दिलों में हमारे लिए एक नफरत एक घृणा लावें की तरह भरी पड़ी है और आए दिन किसी न किसी रूप में बाहर फूट पड़ती है।''

"मैं समझ सकती हूं सौरभ, क्योंकि मैं भी उसी पथ की पथिका हूं। जिस पथ पर आज तुम अपने को अकेला महसूस कर रहे हो।'' शालू ने कहा। मैने लोगों की नज़रों में अपने लिए नफरत देखी है, उनकी अन्दर की घृणा का मुझे अंदाज़ा है। अपनी जगह वे भी ठीक हैं, उन्हें लगता है कि हम उनके अधिकारों का अतिक्रमण कर रहे हैं। लेकिन किसी ने यह नहीं सोचा कि इसमें हमारा कसूर क्या है?

"तुमने कभी मुझसे इस विषय पर बात क्यों नहीं की, शायद तुम्हारा भी मन हल्का हो जाता।'' सौरभ ने कहा।

"----------'' शालू खामोश रही। सौरभ ने पुनः कहा, "कभी सोचा भी नहीं था कि ज़िंदगी में इस दौर से भी गुज़रना पड़ेगा। कभी-कभी तो यूं लगने लगता है जैसे ज़िंदगी एक बोझ बन गई हों।''

"आज देश का प्रत्येक व्यक्ति हमसे नफरत करता है। जबकि वह हमें जानते भी नहीं है। सिर्फ इसलिए कि हम आरक्षण का लाभ उठा रहे हैं। लेकिन किसी के पास यीह सोचने का वक्त ही नहीं हैं कि आरक्षण से जो लाभ हम प्राप्त कर रहे हैं उनसे कहीं बढ़कर हैं वह नुकसान जो हमारे युवावर्ग को मानसिक रुप से पगु बना रहीं हैं।'' "मैं जानती हूं सौरभ, एक लाभ को प्राप्त करने के लिए हमने अपना सब कुछ खो दिया है। सरकार ने हमें आरक्षण की सुविधा तो प्रदान कर दी। मगर बदले में हमारा सारा सुखचैन हमारी मानसिक शान्ति छीन ली और हमें असंतोष से भरी ज़िन्दगी जीने के लिए मजबूर कर दिया। सब कुछ खोकर भी हमें क्या मिला- नफरत और लोगों के ताने एक दर्द जिसे ज़िंन्दगी के आखिरी लम्हों तक हमें झेलना होगा।''

"हमें दूसरे वर्गों के समान शिक्षा सुविधाएं देने की बजाए सरकार ने हमें आरक्षण नाम का पट्टा पकड़ा दिया है। समाज में सुधार लाने की जगह आरक्षण की अवधि बढ़ा दी जाती है। लेकिन नतीजा-तनावपूर्ण यह ज़िन्दगी। मानसिक तनाव से घिरे हम जैसे युवा देश की उन्नति में कितना सहयोग दे पाएंगें इसका सहज ही अंदाज़ा लगाया जा सकता है।''

"शालू इस माहौल में मेरा दम घुटता है।'' सौरभ कहते-कहते रोआंसा हो गया। "हमारी स्वच्छ ज़िंदगी छीन कर हमें आरक्षण के बोझ तले दबा दिया गया है, हम छटपटाते हैं खुली हवा में सांस लेने के लिए, एक शांत जीवन जीने के लिए। लानत है, ऐसी सुविधा पर जो हमारे जीवन की शांति को तहस नहस कर चला गया। आते-जाते लोगों के ताने, स्कूलों और कॉलेजों में मांगों के व्यंग्य-बाण, आखिर कोई कब तक बरदाश्त कर सकता है।''

"लेकिन सौरभ, हमें बर्दाश्त करना ही होगा। हर चोट सहकर भी हमें ज़माने के सामने मुस्कुराना होगा। क्योंकि इस हालात में कुछ कर पाना भी हमारे लिए संभव नहीं है, सिवाय इसके कि हम एक दूसरे के दर्द को बांटने का प्रयास करें।'' शालू एकाएक कहीं खो गई। "काश! हमारे प्रतिनिधियों ने हमें आरक्षण की बजाए वहीं सुविधाएं प्रदान की

होती जो दूसरे वर्ग के लोगों को उपलब्ध हैं तो शायद आज हमारे समाज का स्वरुप कुछ और होता। लोगों के दिलों में नफरत की जगह प्यार और सहयोग की भावनाएं होती।'' सौरभ अपनी रौ में बोलता चला गया। "अगर हमें नौकरी न भी मिलती लेकिन मुझे प्रसन्नता होती कि हम खुली वायु में सांस ले रहें है। न कि आरक्षण के घुटन भरे वातावरण में। और यही सच्ची खुशी होती हमारे लिए।''

"दुआ करती हूं, सौरभ, हमारा यह स्वप्न साकार हो। वह दिन भी आए जब हम नहीं तो आने वाली पीढ़ियों को इस दर्द के अहसास से मुक्ति मिले। किसी तरह के तनाव से परे, वे एक नया जीवन जी सकें हमारी तरह घुट-घुट कर नहीं।'' शालू खामोश हो गई इस खामोशी को तोड़ता हुआ सौरभ का स्वर कमरे में गूंज उठता है। "शालू जब कभी तुम मुझसे बात करना चाहो, बेझिझक बात कर सकते हो। तुम्हारे लिए मुझे अपना मूड बनाने की ज़रुरत नहीं पड़ेगी।'' कहता हुआ हंस पड़ा, लेकिन उस हंसी में भी दर्द की झलक मौजूद थी। शालू कुछ बोली नहीं सिर्फ मुस्करा दी।

दोनों अपने आपको काफी हल्का महसूस कर रहे थे। जैसे बरसों से उफनता सागर थोड़ी देर के लिए शांत हो गया हो।

सज्जन

एक लड़का अपने पापा से- पापा आपसे कोई आदमी मिलने आया है।

पापा-बेटे आदमी नहीं, सज्जन कहते हैं।

थोड़ी देर बाद एक औरत आई, बेटे ने फौरन कहा- पापा आपसे कोई सज्जनी मिलने आई है।

प्रिय सब्स्क्राईबर

वार्षिक ग्राहक बन कर आप लोगों ने जो सहयोग एवं अपनापन दिया उसके लिए हम आप सबका तहेदिल से आभारी हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि आप सबका सहयोग व प्रेम हमें भविष्य में भी सतत मिलता रहेगा। आप सभी बन्धुओं से जिन का सब्स्कृप्शन इस अंक से समाप्त हो रहा है, निवेदन है कि आगे के लिए सब्स्कृप्शन राशि मनी ऑर्डर या बैंक ड्राफट द्वारा समय पर भेज कर हमें कृतार्थ करें।

धन्यवाद

संपादक

सब्स्कृप्शन इस पते पर भेजें :

मुख्य संपादक

'चन्द्रताल' त्रैमासिक पोस्ट बॉ० 25, मुख्य डाकघर, ढालपुर कुल्लू (हि० प्र०) भारत पिन - 175101

वितरण प्रबन्धक :

रणबीर चन्द ठाकुर

19, फैशन सैन्टर,

मॉडल टाऊन मनाली (हि० प्र०) भारत पिन-175131

खलत्से एपीसोड

गतांक से आगे------

-बलदेव कृष्ण घरसंगी

अब तक लोगों का मनोबल बहुत ऊंचा था लेकिन करगिल की हार और ले०क० सम्पूर्ण और मेजर कूटस के आने की वादी में समाचार फैला तो लोगों का मनोबल फिर नीचे चला गया। लेह का मुस्लिम समुदाय ले० के० सम्पूर्ण सिंह के आने से असुरक्षित अनुभव करने लगे। उन्होनें मुझे उनसे हिफाजत की याचना की। मुझे पता था कि लेह लद्दाख के मुस्लिम लोग मेरे प्रति वफादार हैं। मैं खुद हैरान था कि यह विभिन्न धर्म मानने वाले आपस में विवाह करते हैं और बच्चों को पिता का धर्म ग्रहण करना होता है। उनका व्यवहारिक जीवन जात्तीय पक्षपात रहित था। यहां पर सिर्फ मुस्लिम धर्म का एक सम्प्रदाय गैर मज़हब वालों से नही मिलते थे। यहां तक कि वह दूसरे धर्म के लोगों के हाथ से खाना तक नही लेते थें और इनमें से कुछ कट्टरपंथी व भेड़ की खाल में भेड़िए थे जो अफवाहों और यहां के बारे सूचना खुफिया तौर पर देकर पाकिस्तान की मदद करते थे। इसलिए मेजर पृथी चन्द ठाकुर ने ले०क० सम्पूर्ण सिंह व उसकी पार्टी को किले के अन्दर बिठाया और उन्हें हर तरह की सुविधायें जुटाई। जबकि मेजर कूटस इन्हीं के साथ ठहरे।

इसी बीच इन्होनें फ्रंट और कुलियों के बारे में 19 डिविजन को रिपोर्ट भेजा। वहां से आर्डर मिला कि 17 सिख, व 16 गोरखा जवान अपने पर्सनल के साथ हवाई अड्डे की सुरक्षा के लिए तैनात किए जाएं। इस तरह इन्होनें उन्हें अड्डे के चारों और तैनात किया।

खलत्से पर शत्रु का हमला-मेजर पृथी चन्द के पास पुल की रक्षा के लिए जम्मू कश्मीर फोर्स की एक प्लाटून व 40 अस्थाई सैनिक थे। मैनें मेजर खुशाल चन्द ठाकुर को उन लोगों को पैसे की अदायगी के लिए भेजा जिन्होने टुप्स को सप्लाई दिए। इसके अतिरिक्त उन्हें खलत्से की सुरक्षा व्यवस्था को भी देखना था। जब यह वहां पर थे, तभी दुश्मन ने पुल के दूसरी तरफ इनके पोजिशन पर फाईर व गोले बरसा कर भारी हमला कर दिया। जब अन्धेरा छा गया तो जम्मू कश्मीर प्लाटून व अस्थाई सिपाही सब मैदान छोड़ गए। दूसरे सुबह जब मेजर खुशाल चन्द ने इन्हें हालात का जायज़ा दिया तो इन्होनें उन्हें पुल को उड़ा देने को कहा और शत्रु को आगे बढ़ने की सूरत में एम्बुश लगाने को कहा। दूसरे दिन मेजर खुशाल चन्द ठाकुर ने शत्रु के भारी फाईरिंग के बावजूद भी मिट्टी के तेल से पुल को आग लगा दी। एक 3" के मोर्टार बम के टुकड़े से उनका एक आंख जख्मी होने पर भी थोड़े से सिपाहियों के साथ एम्बुश लगाए रहे। यह सब फोजी 2 गोरखा राईफल्ज़ के सिपाही थे जो अस्थाई सिपाहियों को ट्रेनिंग दे रहे थे।

दुश्मनों के कब्जे वाले स्थानों पर यह अफवाह आग की तरह फैल गई कि घुसपेठिए अब लेह की तरफ बढ़ रहे हैं।

इन्होंने तुरन्त 19 डिविजन को खबर भेजी कि अगर लेह को सूचना व अस्त्र शस्त्र नहीं भेजे गए तो उन्हें लेह व हवाई अड्डे को बचाना मुश्किल हो जाएगा।

मेजर जनरल थिमैया का लेह में आगमन; मेजर साहब पिछले दो महीने से जब से हवाई अड्डा बना हर सुबह श्रीनगर को MET रिपोर्ट भेजते थे। इन्होंने लेह के लिए हवाई जहाज भेजने को कहा। लेकिल सब बेकार। इसी बीच स्पीतुक में अफवाह ज़ोर पकड़ रही थी कि यहां पर सिर्फ पाकिस्तानी जहाज ही उतर सकता है। हिन्दुस्तानी नहीं। इन्होंने 22 मई को बादलों के होते हुए भी MET रिपोर्ट भेजी कि सब ठीक हैं। क्योंकि 21 मई के रात को यह अफवाह फैल गई कि 22 मई को पाकिस्तानी लेह पहुंच जाएंगे। यह अफवाह बहुत ज़ोरों पर थी। और 22 मई के दिन सभी हिन्दु व बौद्ध लोग पास की पहाड़ी की और भाग खड़े हुए व उनमें कुछ ने मुस्लिम दोस्तों के घर में शरण ली।

क० पृथी चन्द ठाकुर को यह समझ नही आ रहा था कि वह क्या करें तभी अचानक एक डकोटा हवाई अड्डे पर उतर रहा था। यंह अभी सोच ही रहे थे कि दुश्मनों का है या अपने देश का तभी स्पीतुक के लामा लोग डकोटा से समान उतारते हुए दिखाई पड़े और इन्होंने अपना घोड़ा हवाई अड्डे की तरफ दौड़ा दिया। अब तक सोनम नोरबू और बाबू दोरजे वहां खड़े नज़र आ रहे थे। वहां पर जनरल थिमैया और एयर क० मेहर सिंह नोरबू से बात कर रहे थे। मैनें जनरल को सैल्यूट किया। तभी जनरल ने इनसे मुखातिब हो कर कहा, "पृथी क्या तुम इन गिलगिटी चुहों से डरते हो।'' इन्होंने उत्तर में कहा, सर, "मैं इनसे नहीं डरता, परन्तु मेरे पास स्थाई टुप्स का अभाव है। अगर आप मुझे एक बटालियन टुप्स देते हैं तो मै आपको वचन देता हूं कि मैं इन घुसपैठियों को खदेडुंगा ही नहीं बल्कि नुबरा और छोरबटला पास से होते हुए स्करदु की तरफ कूच करुंगा।

जनरल थिमैया बोले कि आप देख रहे हैं कि डकोटा उतर चुका है। मैं जल्द ही कुछ टुप्स पुनर्सूचना के लिए भेजूंगा। लेकिन आप इस हवाई अड्डे की किसी भी कीमत पर रक्षा करोगे। जनरल ने के० सम्पूर्ण सिंह के वहां

पहुचंने पर उसे हिदायत दी कि तुम्हारा बटालियन बिना कमांड यहां पर है इसलिए आप हमारे साथ वापिस चलो। अब मौसम खराब हो रहा था। और एयर क० ने चेतावनी दी कि हवाई जहाज को दस मिनट में श्रीनगर की तरफ उड़ान भरना है। जनरल ने इस बीच पूछा कि क्या बात है कि लेह में कोई हरकत नज़र नहीं आ रही है तब इन्होंने कहा कि अफवाहों के कारण लोग डर के मारे पहाड़ियों की तरफ भाग गए थे की तरफ इशारा किया जहां से लोग अब नीचे उतर रहे थे। क्योंकि उन्होंने डकोटा को उतरते देख लिया था।

एयर क० मेहर सिंह MET डकोटा का लेह उतरने का प्रसंग इस प्रकार है ज० थिमैया ने जब एयर क० मेहर सिंह को बताया कि वह लद्दाख में लड़ रहे टुप्स के प्रति बहुत चिन्तित हैं और इन्हे सूचना व उनकों सुरक्षित वापिस लाना बहुत ही मुश्किल हो रहा है। तब ए० क० मेहर सिंह ने उनसे पूछा कि लेह में कोई हवाई अड्डा है कि नहीं। जनरल ने बताया कि एक बिना मैटल्ड ऊबड़-खाबड़ हवाई अड्डा है। तब ए०क० मेहर सिंह बोले कि हवाई हैड क० के आर्डर के मुताबिक डकोटा को 12000 फीट की ऊंचाई से ऊपर उड़ाना मना है। लेकिन तुम्हारी दोस्ती के लिए वह लेह के लिए उड़ान भरेगा। और 22 मई को पुंछ की तरफ उड़ान भरने की बजाए वह लेह की तरफ उड़े और डकोटा ने इस तरह पहली और लेह में लेंड किया। खलत्से की तरफ कूच : जैसे सभी को पता है कि जमादार हरनाम सिंह की सारी प्लाटून खलत्से पोस्ट को छोड़ कर गई थी और अब यह सब लेह के पास गावों में छुपे हुए थे। जब उन्होनें डकोटा को उतरते देखा तो उनका साहस बढ़ गया और दोपहर तक वे सब बेरकस में वापिस आ गये। इन्होंने सबको इकट्ठा कर खूब खरी-खोटी सुनाई और लताड़ा भी । उन्हें कोर्ट मार्शल कर सबको जेल में डाल देने की धमकी भी दी। लेकिन इनके पास इन सबको गार्ड करने के लिए टुप्स की कमी थी। काफी झाड़ने के बाद इन्होनें इनसे पूछा कि क्या वह खलत्से की तरफ जाने को तैयार हैं। वह सब मान गए और 23 मई को सबने खलत्से की तरफ कूच कर दिया। यहां पर यह अफवाह थीं कि नेमों में पाकिस्तान के कुछ अफसर व टुप्स पहुंच गई हैं। इस तरह इन्होनें नेमो से होकर गुज़रने का फैसला किया जहा ये लोग मेजर खुशाल चन्द ठाकुर व 2 गोरखा के आदमी घात लगाए बैठे थे। इन्होनें मेजर खुशाल चन्द और उसके पार्टी को वापिस लेह जाने की हिदायत दी ताकि आराम कर सकें। लेकिन मेजर खुशाल चन्द ठाकुर ने कहा "नहीं" अलबत्ता हम आगे जाएंगे और आप वापिस जाकर हालात को काबू करेंगे।" इन्होंने उनसे फिर विनती की कि उनका स्वास्थ्य इसकी इजाजत नहीं देता है, साथ में उनके साथियों को भी आराम की जरुरत हैं। लेकिन मेजर खुशाल चन्द ने आर्डर मानने से इन्कार कर दिया। इसके साथ मेजर पृथी चन्द ने घोड़े को एड़ लगाई और आगे की ओर कूच कर दिया। इस तरह यह लोग नेमों पहुंच गए। वहां पर क्या देखते हैं कि सारा गांव उजाड़ पड़ा है और कुछ बुजुर्ग इन्हें देखते ही पास आ गए और कहने लगे कि आपने तो हमे सुरक्षा प्रदान करने का वचन दिया था लेकिन आपने तो हमें भेड़ियों के आगे डाल दिया है। लेकिन इन्होनें उन्हें ढाढस बंधाते हुए कहा कि अब डरने की कोई बात नहीं। डकोटा हवाई जहाज लेह में उतर चुका है और किसी भी वक्त सैन्य सहायता पहुंच सकती है। इसके बाद वह ससपोल की तरफ बढे। यहां पर भी यह अफवाह गर्म थी कि पाकिस्तानी अग्रिम टुकड़ी कभी भी पहुंचने वाली है। आगे बढ़ने पर इन्हें गांव वासियों ने बताया कि दुश्मन के टूप्स खलत्से में हैं और आज नुरला में कुछ अफसरों के पहुंचने की बात है। इसके बाद यह लोग टिमुसंगज गांव पहुंचे व रात्रि वहीं बिताई। दूसरे दिन नदी के पार शत्रु की कुछ गतिविधि देखने को मिली। इस तरह इन्हें पूरा दिन गांव में ही रहना पड़ा व रात्रि होते ही स्कीदियंग गांव को वाया टीपा गांव से होते हुए बढ़े। यहां पर इन्हें खबर मिली कि खलत्से में चार गिलगित फौजी कुछ लकड़ी के कारीगरों के साथ एक घर में डेरा डाले हैं। इन्होनें एक राफ्ट बनाया है और रोजाना पुल पर जाकर इसकी मुरम्मत करते हैं। जबकि शत्रु सेना नदी के दूसरी तरफ डेरा डाले हुई है। खलत्से गांव वासियों से जबरदस्ती पुल का काम करवाया जाता है। इन्होनें कुछ लोगों को खलत्से इस संदेश के साथ भेजा कि आज रात्रि सब अपना गांव छोड़ कर स्कीदियंग गांव आ जाएं। भारतीय वायुसेना पुल साईट पर बम वर्षा करेगी। रात्रि को इन्होनें आने प्लाटून को गांव तक ले गए। वहां पर शत्रु डिटेचमैंट एक सुनसान घर को कब्जा करके बैठे थे। हमने इसको घेर लिया व हमला बोल दिया। सभी शत्रु के सैनिक मारे गए इनमें चार आरटिफाईसर थे। इसके बाद पुल साईट पर जाकर राफ्ट को तबाह कर दिया और अपने एक तिहाई सैनिकों को स्नाईपर अटैक के लिए वहीं पर तैनात कर बाकी स्कीदियंग गांव वापिस आ गए। दूसरे दिन शाम को पुल का शत्रु पोस्ट छीन लिया। इस पोस्ट के हवलदार इन्चार्ज ने बताया कि उन्होनें शत्रु के एक जे०पी० औ० और तीन दूसरे रेंक्स को मार गिराया इस तरह सबका मनोबल बहुत ऊंचा था। यह हवलदार और लांस नायक उनमें सबसे आगे थे जिन्होंने कुछ दिन पहले पोस्ट को छोड़ दिया था। आज वह गर्व महसूस कर रहे थे कि उन्होंने शत्रु के सैनिकों को मार गिराया। अब यह रोजाना का काम था कि हम रात को पुल साईट में घात लगा देते और उसे स्नाईपर फाईट द्वारा कवर करते। इस तरह दुश्मन सावधान हो गया। इसके बाद

उन्होंने पुल की मुरम्मत करना रहने दिया। कुछ स्थानीय लोगों को कहा गया कि वे उन्हे शत्रु व उनके एजेंटस के बारे में खबर दे। अगर कोई वहां नज़र आए तो उसे पकड़ कर उनके हवाले कर दें। एक रात इन्हें दो अधेड़ आदमियों ने बताया कि शत्रु के कुछ सदस्य लोगों से शत्रुओं के लिए रसद इकट्ठा कर रहे हैं। इस प्रधान ने उन्हें पकड़ने के बाद बांध कर इनके पास भेजना चाहा लेकिन यह लोग ना नुकर करने लगे तो गांव वासियों ने उन्हें सिन्धू नदी में फैंक दिया। इस तरह से वह शत्रुओं से सम्बन्धित खबर लेने से चूक गए। इस बीच यह पता चला कि पिछले दो दिनों से नदी पार कोई हलचल नही हो रही है। स्नाईपर पार्टी को चेक करने तथा फ्रंट को आबजर्व करने वह खलत्से को रवाना हुए। इन्होंने एक तिहाई जवानों को ट्रेन्च में देखा और पाया कि शत्रु की तरफ से कोई हरकत नहीं है। तब इन्होंने अपने आदमियों को ट्रेन्च से बाहिर आने को कहा तथा शत्रु को हमले के लिए आकर्षित करने के लिए सभी इकट्ठे खड़े हो गए। लेकिन शत्रु की तरफ से कोई गोलीबारी नहीं हुई। इस तरह जवानों ने ट्रेन्चज़ में अपनी पोजीशनें ले ली और क० पृथी चन्द एक स्थानीय निवासी शरब के साथ खलत्से की तरफ चलें। अभी इन्होंने 100 गज़ का फासला तय किया होगा कि इन पर एल.एम.जी. ब्रेनगन व राईफल द्वारा हमला हो गया। फाईरिंग ऊंचाई से नीचे की ओर हो रही थी। इस तरह गोलीबारी बेतहाशा थी। इन्होंने एकदम शरब को अपने आपको कवर करने के लिए कहा क्योंकि उसका अधिकांश शरीर शत्रु के निशानें के लिए खुला पड़ा था। शरब के लाल गाल इस वक्त डर से सफेद पड़ गया था। इन्होंने उसे अपने साथ भागने को कहा क्योंकि वही रहे तो गोली का निशाना बन सकते हैं। लेकिन शरब का जबाव था कि कैसे भागें जब चारों ओर से गोलियों की बरसात हो रही है। तब इन्होंने कहा कि उन्हें गोली नही लगेगी क्योंकि वह दोनों बौद्ध हैं। और हमारे देवी-देवता हमारी रक्षा करेंगे। यह कहने के साथ ही उन्होंने भाग कर एक पत्थर की आड़ में शरण ली। इस तरह शरब ने भी दौड़ लगाई और जब वह कवर लेता तो पृथी चन्द ठाकुर दौड़ते। अब तक वह dead ground में था और इन्हें अपने पास इशारे से आने को कहा। लेकिन तभी इन्होंने 3" मोर्टार फाईर का धमाका सुना जो कुछ ही फुट दूर फटा था। इन्होंने तुरन्त अपना सिर एक चट्टान में छुपा लिया बाकि शरीर भगवान की मर्जी पर छोड़ दिया। अब गोला बारुद इनके आसपास गिरने व फटने लगे। तभी अचानक इन्होनें अपने स्नाईपरज़ द्वारा फायर होते सुना। शत्रु ने भी इन्हें मरा समझ फाईट इस पार्टी की तरफ मोड़ दिया। कुछ गोलियां इनकी तरफ चली मगर वह अब सुरक्षित थे। वह गांव की तरफ नीचे बढ़े। जब शरब और दो नौजवानों ने इन्हें देखा वह एक दम अपने घर वापिस चले गए। इन्होंने सोचा शायद शरब इन्हें ज़िन्दा देखकर इन्हें भूत समझ बैठा है और इन्हें डर है कि यह नौजवान कहीं इन पर हमला न बोल दें। लेकिन वह क्या देखते हैं कि यह तीन तो मेरे स्वागत में अरा की बोतल लेकर आ रहे हैं। अश्रु भरे आंखों से उन्होंने इनका अभिवादन किया और इन्होंने उनको गले से लगा लिया।

लगभग छ दिन वह स्कीरियंग में रुके। दिन के वक्त यह लोग घर के अन्दर रहते। शत्रु खेमे का आबज़रवैशन पोस्ट दूसरी तरफ साफ दिखाई देता। हर एक घर ने खलत्से के परिवार के 3-4 आदमियों को हर घर में शरण दे रखी थी। जबकि परिवार के सभी पुरुष और स्त्री खेतों में चले जाते तो क० पृथी चन्द का ड्यूटी छोटे बच्चों की देखभाल करना था। जब कोई बच्चा रोता था तो यह गुड़ का टुकड़ा मुंह में डाल देते यह हाल था आफिसर कमांड फोर्स का।

प्रिय पाठको,

जैसा कि आप को ज्ञात है लाहुल स्पीति की लोक कला, साहित्य व संस्कृति को सही रूप में सामने लाने व लुप्त होती लोक विधाओं को संरक्षित करने व पुनर्जीवित करने तथा आस पास की अन्य हिमालयी संस्कृतियों के साथ तुलनात्मक विवेचना द्वारा आत्म परिष्कार आदि के उद्देश्यों को लेकर 'चन्द्रताल' का प्रकाशन आरम्भ किया गया था। सभी लेखक बन्धुओं से आग्रह है कि वे अपने हर प्रकार के लेख व कोई भी साहित्यिक रचना 'चन्द्रताल' में प्रकाशनार्थ भेज कर हमारे इस अनुष्ठान को आगे बढ़ाने में अपना सहयोग दें। हिमाचल के सभी लेखक बन्धुओं से निवेदन है कि वे अपने इलाके की संस्कृति से सम्बन्धित लेख 'चन्द्रताल' के लिए भेज कर हमें प्रोत्साहित व अनुगृहीत करें। 'चन्द्रताल' के पृष्ठ हर प्रकार के लेखकों व पाठकों के लिए खुले हैं। हमारा आग्रह है कि आप लोग ज़रा भी न हिचकें। पाठकगण हमें अपनी प्रतिक्रिया से अवश्य अवगत कराते रहें।

धन्यवाद।

■ संपादक

शादी का सीज़न

जुलाई माह के आते ही शादी के कार्ड आने शुरु हो जाते हैं। रोहतांग खुलते ही लाहुल में शादियों का सिलसिला जो शुरु हो जाता है। पहले यह ब्यौल्हा (नवम्बर) में होता था लेकिन नई बाज़ार व्यवस्था व नकदी फसलों की सेहत को देखते हुए इसे चार महीने पहले ही व्यस्था में डाल दिया गया है। कार्ड आते ही कईयों के चेहरे खिल जाते हैं। हां गाड़ी वालों को तो कतई चिंता नहीं रहती । यह हो ही नहीं सकता कि आपके पास गाड़ी हो और अलग से कार्ड ना आए। फिर कुछ ग्रुप्स का यह भी मानना है कि इन शादियों में क्यों न जाएं क्योंकि जितना खाओ पियो बिल का चक्कर ही नहीं। नई व्यवस्था में रिश्तेदारों से ज्यादा एक नए ग्रुप का शादियों में प्रभाव रहता है। जिसका उदय, नए सम्बन्ध, जो इस व्यवस्था से अलग पनपता है, से हुआ है। एक खास बात इन शादियों की और है वह यह कि सालों साल वही गिने चुने गानों पर थिरकना लेकिन थिरकने के अंदाज़ ज़रुर बदले हैं। साठ के दशक का 'बेता' डांस, फिर बांसुरी का फिल्मीकरण, सत्तर के दशक के शुरु में नई पीढ़ी का डिस्को, फिर अस्सी के दशक में डिस्को, लाहुली और ब्रेक डांस का मिला जुला अंदाज़ जो नब्बे के दशक में फिर पुरानी संस्कृति की तरफ झुकाव एक नई सोच की और संकेत कर रहा है। हिन्दू समाज की दहेज प्रथा पिछले दरवाज़े से अन्दर आने की काफी कोशिश कर रहा है। लेकिन हम अभी इस लिए बचे हैं कि हमारी हैसियत इस लायक अभी नहीं बन पाई है कि हम इसके नाज़ नखरे झेल सकें। वरना इसे अन्दर आने देने से कोई भी गुरेज़ नहीं करेगा।

मटर का हल्ला

शहरों में जननाट्य मंच 'हल्ला बोल' नुक्कड़ नाटक करते हैं जिसका थीम मुख्यत: सामाजिक राजनैतिक कुरीतियां होती हैं। लेकिन लाहुल में जुलाई अगस्त का महीना मटर के हल्ले से भरपूर होता है। गांव के हर नुक्कड़ में यही हल्ला रहता है। वर्ष के चार मौसम की तरह लाहुल में भी चार मौसम हैं। शीत-हैलीकॉप्टर का मौसम। बंसत-'सड़का गुफा होटल पिड़िया' का मौसम। गर्मी-गर्मी का मौसम यहां आता ही नहीं। सावन- मटर-ए-होप्सो मौसम। पतझड़-'अड्डू सोसाईटी-ए-ट्रक यूनियनों' मौसम।

इन्ही चार मौसमों के गिर्द हम घड़ी की सुईयों की तरह घूमते रहते हैं। मटर का हल्ला यानि 'अयों रेट फिक्स शुइए'। 'तरिंग सोसाईटीज़े मटर चुमज़दा'। 'सोसाईटी बेचे लेरिंग दौरे रूठे तोतौरे'। 'यिंतू शुरु बेचे आखिर तचे सा टंगा फिक्स शुचदे'। 'तरिंग दू नगरो दोरे ड्रगतिरे। इन्हीं वाक्यातों के गिर्द यह मौसम गुज़रता है। 'अच्छा! मटरो बोरिंग केलिंगड्रा हुचिदा। ह: बब्बा छी लिगसत्तौर ए। अंजीरिंगला लंगज़ी शौरे ञरचा। कैरे बरनम्परे ठीक तोतोईए। लिगंनम फसलों बुरा हाल तोदे? इन सबके बीच परिवार के बाकि सदस्य कहां रह जाते हैं पता ही नहीं चलता। शायद! खेतों के मेंड़ों की तरह ही बाज़ार व्यवस्था के घुमावदार पैचीदगियों से अनभिज्ञ आने वाले सुनहरे कल के इन्तज़ार में ही ज़िन्दगी गुज़ार देते हैं।

गाड़ी बनाम सड़कें

हमें याद है जबसे लाहुल और स्पिति में सड़कें बनी हैं और उन पर गाड़ियां चलनी शुरु हुई हैं। तबसे गाड़ी और सड़क के बीच मुकद्दमा चला हुआ है। इस लड़ाई में ड्राईवर और एस०डी०ओ० की कौन सुने।

सरदार उजागर सिंह, मोहब्बतू, कलज़ंग से लेकर अब तक कितने लोग इन सड़कों पर गाड़ी चला चुके। इसी तरह कितने पी०डब्ल्यू०डी० के एस डयू और मिस्टूल बदल गए और बात "चक दे" से लेकर "प्यार नाल" तक पहुंच गई। मगर, यह मुकद्दमा खत्म ही नहीं हो रहा। आरोप और प्रत्यारोप से इतनी फाईलें बन गई हैं कि अब जज (जनता) को भी फैसला देना मुश्किल हो रहा है। व्यवस्था की छाननी के छेद का आकार इतना हो गया है कि स्थायित्व के बड़े-२ रोड़े ही बाकी रह जाते हैं। मामूली कंकर व रेत छन कर कहां जाते हैं रब ही जाने। लेकिन मुकद्दमे की पैरवी में यह बात कभी भी नहीं आती। इस वजह से सभी सम्बन्धित लोग हर वक्त परेशानी सी महसूस करते हैं।

होप्सो होप

उम्मीदों के बेलों के सहारे सपने संजों कर सोनम ने भी चाहा था कि इन नाजुक खारिश करने वाली बेलों के सहारे ज़िन्दगी के बीते कल की तकलीफों से छुटकारा पाए। 'होप्सो होप कुरचा कर्ज हुन्जे ई पी लेके बीघा होप्स पोंशीततो'। मैं ने जाकर हालचाल पूछा कैसे हो। बाज़ार व्यवस्था से अनभिज्ञ आंखों में अजीब सी चमक लिए उसने कहा, 'कैतिंग ची रमदी बगज़ातिंग। कैरे अपताईएं चिले देर।' बाहर की आराम भरी ज़िन्दगी और अब जब हमारी कुछ उम्मीदें बंधी हैं तो तुम जलते हो या फिर तुम्हारे दिमाग में यह बात होती है कि यह यहां बैठ कर हम से आगे न निकल जाएं। 'कैरे दाणे बंगज़ा किराड़ शुची तोतोईं। दौर अपोंईता ढेशकेला मखंड्री। हेन्तेग खरंग छिट्रो वचे गप्पा लाह।' लेकिन समय का पहिया तो चलता रहता है। आम किसान की तरह मार्केट प्रणाली व बिचौलिया व्यवस्था से अनभिज्ञ वह औद्योगिक कच्चा माल पैदा कर रहा है। जहां उसका मुकाबला अन्तरार्ष्ट्रीय बाजार से है। लेकिन उम्मीद पर ही दुनियां टिकी है। बाजार की इस लड़ाई में जो लड़ेगा वही टिका रहेगा। लेकिन ज़रुरत है इस बीच वह अपने आपको हर उस चीज़ से लेस कर ले जिससे जीत की उम्मीद बनी रहे।

"हक:" से सम्बन्धित कुछ शकुन-विचार

लाहुल में एक पक्षी पाया जाता है 'घुग्गी'। स्थानीय बोली में (पट्टनी) इसे "हक:" कहते हैं। बुजुर्गों द्वारा इस पक्षी के सम्बन्ध में कुछ 'शकुन-विचार' व्यक्त किए गए हैं। यह पक्षी सिर्फ गर्मियों में ही इस इलाके में पाया जाता है। सर्दियों में यह कहां चला जाता है, कोई पता नहीं। वसंत काल में (रेलमो) यह फिर इलाके में प्रकट हो जाता है। इस के प्रथम दर्शन के साथ जोड़ कर ही ये शकुन-विचार किए गए हैं जो इस प्रकार हैं:-

(क) यदि प्रथम बार "हक:" को उड़ते हुए देखें तो उस का अर्थ होगा कि वर्ष भर भाग दौड़ का ज़ोर रहे।

(ख) यदि प्रथम बार पक्षी का पीठ दिखे तो उसका अर्थ होगा कि कपड़े लत्ते आदि में कमी न रहे।

(ग) यदि प्रथम बार छाती (कुर) दिखे तो उसका अर्थ होगा कि वर्ष में अन्न-जल भरपूर मिले।

(घ) यदि प्रथम बार पक्षी का बगल का हिस्सा दिखे तो रोग आदि की संभवना रहे।

(ङ) यदि प्रथम बार पक्षी का स्वर (घूं-चोर-कक्का-घूं) मात्र ही सुनें तो अपशकुन रहे, रुदन-क्रन्दन की भी संभावना रहे।

हरी चन्द राणा, लिंगर

डी. डी. टी. और पुरुष जनन विकार

कीटनाशक डी. डी. टी. सयुंक्त राज्य अमेरिका में तो बेन है मगर विश्व के कई देशों में यह अभी भी व्यापक तौर पर इस्तेमाल हो रहा है, उसमें भारत वर्ष भी शामिल है, को अब पुरुष जनन सम्बन्धी विकार के बढ़ने में सन्देह जनक पाया जा रहा है। हाल ही में डी. डी. टी. के जैविक गुण आविष्करित किए गए। मानव और जानवरों के जनन सम्बन्धी जिसमें विकृत जननेन्द्रिय, अण्डकोष का कैंसर और उनसे जुड़ी समस्याओं का इससे आज विश्व में कारण माना जा रहा है। यह बात सयुंक्त राज्य अमेरिका के सरकारी पर्यावरण सुरक्षा एजैंसी और उत्तरी केरोलिना युनिवर्सिटी के अन्वेषकों ने कही है। लाहुल में इस कीटनाशक का प्रयोग डी.डी.टी. और एलड्रिन ब्रांड नाम से होता है। इसका अन्धाधुन्ध प्रयोग चिन्ता का विषय है। आगे चल कर यह डी. डी. टी. और एलड्रिन का अवैज्ञानिक इस्तेमाल लाहुल में बड़ी संख्या में पुरुष योन-विकारों का कारण बन सकता है।

वाशिंगटन यू०एस०ए०

नन्दी द्वारा तन्त्रानुष्ठान

-सतीश कुमार लोप्पा

बोला चनार्णी ना लगी ओ झिमीयाना रिबीया सुरुगा भारूरू तारे!
बोला अऊकी ना द्रोए दीती बिरू बल्ला राणा चौरा दी तोरू गोटे

बीरबल राणा का समय था। घुषाल वासियों पर एक विपत्ति आन पड़ी। संभवत: 18 वीं सदी के उतरार्द्ध की बात रही होगी। घुषाल में देवी तिल्लो की पूजा अर्चना बड़े ज़ोर-शोर से हुआ करती थी। ग्राम वासियों की देवी पर पूर्ण आस्था थी। गांव के निकट ही देवी का मन्दिर था। प्रतिवर्ष ग्रीष्म में प्रथम श्रावण को पूरे लाहुल में (पट्टन) मनाए जाने वाले त्यौहार 'शेगचुम' के बाद दूसरे दिन यहां पर देवी तिल्लो की स्तुति में एक उत्सव मनाया जाता था। देवी की स्तुति सम्बन्धी सभी अनुष्ठान आदि विधि पूर्वक सम्पन्न कराने की जिम्मेवारी वारी के 'थलीं' कुल के लब्ध-प्रतिष्ठ गूर ट्रशी 'पड़शीरा' के सुपुर्द हुआ करता था। उन के रहते किसी को कोई चिन्ता करनें की गुंजाईश नहीं रहती थी कि देवी की स्तुति में कोई कोर कसर रह जाए। किन्तु इस वर्ष अपनी वृद्धावस्था के कारण या किञ्चित रुग्णता आदि के कारण ट्रशी 'पड़शीरा' उत्सव में आकर अनुष्ठानादि सम्पन्न कराने में असमर्थ थे और इस बात से बीरबल राणा भली प्रकार अवगत थे। अब इस महत्वपूर्ण उत्सव को कैसे विधिपूर्वक सम्पन्न करवाया जाए ताकि देवी तिल्लो प्रसन्न रहें और ग्राम वासियों को उन के कोप का भाजन न बनना पड़े; इसी बात को लेकर राणा व घुषाल वासी चिंतित थे। कोई समर्थ गूर ही इस उत्सव को सम्भाल सकता था, अनिष्टकारी-अदृश्य-मानवेतर शक्तियों से टक्कर ले सकता था। क्या किया जाए? इसी विषम परिस्थिति पर विचार करने के लिए बीरबल राणा ने घुषाल वासियों को शाम के वक्त एकत्र होने का हुक्म जारी किया।

शाम हो चुकी थी, अन्धकार घिर आया था। घुषाल की सरज़मीं पर, घुषाल के खेतों पर चन्द्रमा अपनी चांदनी बिछाए बैठा था। (शायद उसे भी उत्सुकता थी कि घुषाल वासी आज चबूतरे पर क्या करने वाले हैं) आकाश तारों से आच्छन्न! निरन्तर उन की आभा प्रखर हो रही थी। वातावरण में एक अजब अलौकिकता थी। इधर चन्द्रमा चमक रहा था, उधर तारों की रोशनी प्रखरतर हो रही थी। ऐसे चमत्कारी आलम में घुषाल का जन समूह बीरबल राणा की अगुआई में चबूतरे पर विचार मग्न, ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो भेड़-बकरियों का कोई झुण्ड किसी 'गोट' में विश्राम कर रहा हो। उनके हिलते होंठ, जैसे शब्दों की जुगाली कर रहे थे।

बोला जोड़ी ना माणू वरी जोगू भेजी ट्राशी 'पड़ाशीरा' पूछे।
बोला ट्राशी 'पड़ाशीरा बोला बोलादे नान्दी पूतुरु मेणी प्यारी।

अन्तत: जनसभा ने निर्णय किया कि दो आदमी अगले दिन प्रात: वारी भेजे जाएं, जो पड़शीरा को घुषाल लिवा लाएं या उन्हीं से पूछें कि क्या उपाय हो सकता है। क्यों कि घुषाल वासियों के पास कोई विकल्प नहीं रह गया था। अत: स्वयं ट्रशी पड़शीरा ही एक मात्र व्यक्ति थे जो इस परिस्थिति का उचित समाधान दे सकते थे। सभा द्वारा निर्दिष्ट दो आदमी अगले दिन वारी आ पहुंचे। उन्होंने ट्रशी पड़शीरा को राणा बीरबल व घुषाल वासियों की चिंता का ब्यौरा देते हुए यथेष्ट आदेश-निर्देश देने का आग्रह किया। उनकी बातें सुनकर ट्रशी पड़शीरा मुस्कराए और निकट बैठे अपने युवा पुत्र नन्दी की ओर संकेत करके बोले, यह मेरा प्रिय पुत्र नन्दी तंत्र विद्या में पारंगत, अपने कार्य में निपुण व हर स्थिति से निपटने में समर्थ है। देवी के अनुष्ठान अवश्य विधि पूर्वक सम्पन्न होंगे, यह भार मैं अब पुत्र नन्दी को सौंपता हूं! यह तुम्हारे साथ ही घुषाल जाएगा। घुषाल वासी निश्चिंत रहें।

बोला आगे चालूंदे द्रगूणी निशाणी पीछे चलोरु नान्दी।
बोला दैने नू हाथे गुगूलेरी धूपे बामे नू हाथे अरूजे।

श्रावण प्रविष्टे तीन, घुषाल में देवी का उत्सव आरम्भ हो चुका है। देवी के पूजानुष्ठान आरम्भ हो रहे थे। सब से आगे नगाड़ा वादक नगाड़ों पर विशेष राग बजाते हुए चल रहे थे। नगाड़ों पर पड़ने वाली प्रत्येक गहन चोट मानो दर्शकों के दिलों पर पड़ रही थी, एक विलक्षण चोट, जो आहत नहीं आह्लादित करती थी। उन के पीछे गूर नन्दी अपने पूरे जाहो-जलाल के साथ, अपने पूर्ण सामर्थ्य के साथ, आत्मविश्वास जनित कान्ति चेहरे पर लिए हुए अर्धनग्न, केश खुले हुए, ऐसे चल रहा था जैसे इस लोक का न होकर किसी अन्य लोक का प्राणी हो। उन के दाहिने हाथ में 'घुण्कड़छ' था जिस में से गुगल नाम के पवित्र सुगन्धित धूप का धुआं ऐसे उठ रहा था जैसे कोई बादल का टुकड़ा नन्दी के हाथों में खिंचा आया हो। उसका बायां हाथ देवी की स्तुति में प्रणाम की विशेष मुद्रा में विनम्र और स्थिर था। यद्यपि अपने पिता के साथ वह अनेक बार इस उत्सव-कर्म का निर्वाह सफलता पूर्वक कर चुका था तथापि आज का दिन उसके जीवन का एक विशेष दिन था। उसके सम्पूर्ण तंत्र विद्या का इम्तिहान था।

बोला सावा खेलूंदे रोकूडू ना देबूडू डेहरा खेलूंदे नान्दी।
बोला घूषे ना लगी ओ जोगूणी रे जात्रे खेला खेलादे लागी।

देवी के अनुष्ठान अब पूरे यौवन पर थे। मन्दिर के प्रांगण में रोकुडू व देबूडू नाम के दो वादक बांसुरी पर जोगणी पूजा के राग बजा रहे थे। क्या कमाल था उन की बांसुरी में! कहीं मुर्दे भी जी न उठें! (यदि जला न दिए गए हों) इन दो वादकों के बारे में जनश्रुति है कि वे किन्हीं रागों को जब चरम पर ले जाते थे तो मस्तक पर तृतीय नेत्र खुल जाया करता था। जिसे छिपाने के लिए वे अपनी टोपी नीचा कर के रखा करते। उधर मन्दिर में पूजारत नन्दी पर देवी तिल्लो का साक्षात् अवतरण हुआ था। गूर नन्दी पूर्णतः देवी के वश में था, देवी की जुबानी बोल रहा था। घुषाल वासी श्रद्धा से नत, हाथ जोड़े देवी की स्तुति कर रहे थे। ताकि देवी उन पर कृपालु रहें, प्रसन्न रहें। एक अलौकिक वातावरण था जो सभी उपस्थित जनसमूह को अभिभूत किए हुए था। अब लग रहा था कि सचमुच घुषाल में जोगणी का उत्सव अपने चरमोत्कर्ष पर है।

बोला भलीकारी नचा ओ घूषेरी याणी हिनाणीं मुनाणी बासे।
बोला भलीकारी नचा ओ घूषेरी गबूरु पटूका तेणी प्यारी डोरे।
बोला भलीकारी नचा ओ घूषेरी घरानी मूंगा मोती गाड़ेरी हारे।

देवी स्तुति के अनुष्ठान सम्पन्न हो चुके थे। गूर नन्दी ने इस उत्सव का संचालन अपने पिता की ही तरह सफलता पूर्वक सम्पन्न करके अपनी योग्यता और अपने तंत्र-कर्म में निपुणता और समर्थता साबित कर दी थी।

अब समय था उत्सव का सम्पूर्ण आनन्द लूटने का। वादकों ने बांसुरी व नगाड़े पर स्तुति के राग समाप्त कर 'सवह' (प्रांगण) के नर्तन के राग (रुणकु-झुणकु) छेड़ रखे थे। उन के वादन में वह मिठास, वह गहराई, वह तीक्ष्णता और वह माद्धा था कि नर नारी आबाल-वृद्ध सब प्रांगण में नाचने के लिए आमादा थे। लोग अपने आप को नाचने से रोक नहीं पा रहे थे। भीतर से ही मानो कुछ घुमड़-घुमड़ कर नृत्य के रूप में परिणत हो रहा था।

घुषाल की युवतियां कितनी खूबसूरती के साथ नाच रहीं थी। उन का पादलाघव, तन का लोच, न जाने कितने युवा दर्शकों का कत्लेआम कर रहा था। उस पर हिनाणि-मुनाणि सरीखे वन फूलों की उनके तन पर रची सुगन्ध हवा के साथ तैरती दूर-दूर तक लोगों को मेहका जाती। मादकता थी, लेकिन कामना का लेशमात्र भी नहीं! हर ओर एक स्वच्छता और आनंदातिरेक का आलम!

घुषाल के युवकों की क्या कहें! ऐसे आत्मविस्मृत, मदमस्त नाच रहे थे मानो आज ही अपना सारा नृत्य कौशल लुटा देना चाहते हों। रक्त और वाणी का ओज जैसे इसी दिन के लिए था। और वह कमर पर बंधा पटुका (कम चौड़ा शाल) क्या फब रहा था।

घुषाल की वृद्ध गृहणियों के भी लिए यह दिन चौका-वर्तन के साथ खटते रहने का नहीं था। उन का मन भी षोड़षी बाला की तरह बल्लियों उछल रहा था। मुक्ता हार और मूंगे के आभूषणों से सुसज्जित, उन का वह मन्थर परिपक्व, अंगचालन बरबस लोगों की दृष्टि अपनी ओर खींच लेता। आज ये गृहणियां भी नवयौवनाओं से होड़ ले रहीं थीं जैसे वे अपने अतीत को साकार कर रही हों। कौन कहता है लाहुल में स्त्रियों का नृत्य निषिद्ध था?

देवी तिल्लो प्रसन्न रहें!!

लघु शायरी

हमारी घाटी लाहौल स्पीति

रिवाज़ जुदा है आपस का, यूं अपनी-अपनी रीति है।

कैलांग रहे या काजा में, इलाका लाहौल-स्पीति है।

1. सुमदों गांव मुहाना हैं, लोसर तक सुहाना है;
ग्रम्फू गांव बुरा ना है, इतिहास यह बहुत पुराना है।
कि ऊंचे पहाड़ नीची नदियां वादि-ए-हाल सुनाती है;
कैलांग रहे या काजा में, इलाका लाहौल-स्पीति है।

2. पानी की थोड़ी कमी हैं, काफी सी फिर भी नमी है।
रेतीली ज्यादा जमी हैं, जनता में दुःख न ग़मी हैं।
कि आलू, मटर, जौ की यहां, होती खूब खेती है;
कैलांग रहे या काजा में, इलाका लाहौल-स्पीति है।

3. लारी तक पक्का रोड़ है, दिखते न ओझल मोड़ है,
बस में भीड़ व होड़ है, पीछे तो कैंची मोड़ है।
कि साल पूरे बारह महीने, सड़क खुली यहां रहती है;
कैलांग रहे या काजा में, ज़िला तो लाहौल-स्पीति है।

शिव दयाल

देवताओं का वृक्ष 'शुर'

सोनम अंगरुप

इलाका लाहौल में पाये जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण वृक्षों में शुर यानि जुनियर का वृक्ष है। इसकी लकड़ी और पत्तियों के बगैर लाहौल का कोई भी त्यौहार या उत्सव पूर्ण नहीं माना जाता है। इस वृक्ष को शायद इसीलिए देवीदयार यानि देवताओं का वृक्ष भी कहा जाता है। पर्यावरण व परिस्थितिकीय (Ecological) सन्तुलन एंव इनकी रक्षण के लिए इसकी भूमिका कम महत्वपूर्ण नहीं है। आइए इस वृक्ष के बारे में कुछ और जानने का प्रयास करें।

'शुर' को अंग्रेजी में पेन्सिल सिडार या जुनिपर कहते हैं। वैज्ञानिक नाम जुनिपरस मेक्रोपेडा (Juniperious macropeda) इसको बलोचिस्तान में अपर्ण या घुश्की, पश्तों में औबुश्त, चितराल में सेरस, किन्नौर और लाहौल स्पीति में शुर या शुकपा, गरवाल कुमाऊं में धूप और नेपाल में धूपी कहा जाता है। यह वृक्ष नेपाल तथा पश्चिमी तिब्बत से लेकर भीतरी हिमालय के शुष्क ऊंची घाटियों से होकर अफगानिस्तान, बलोचिस्तान, फारस और अरब तक समुद्र तल से पांच हजार फुट से लेकर चौदह हजार फुट की ऊंचाई में पाया जाता है।

देवीदियार छोटे से दरमयाना दर्जे का वृक्ष है। इसकी ऊंचाई 50-60 फुट तक ही होता है। परन्तु इसका तना नीचे से काफी मोटा होता है। इसकी मोटाई को दरशाते हुए ब्रन्डिस ने लाहौल में देखा हुआ एक वृक्ष का हवाला दिया है, जो कि शायद विश्व का सबसे बड़ा वृक्ष है। इस वृक्ष की मोटाई उन्होंने 33½' बताया है। यानि इस का घेरा लगभग 11 फुट और 4½ फुट की ऊंचाई पर कटे तने पर 9 फुट चौरस कमरा बनाया जा सकता है।

जुनिपर में फूल मई में और फल अगले साल अक्तूबर के महीने में पक कर तैयार होता है। दुर्भाग्य ये जुनिपर के पौंधों को पौध ाशाला में तैयार करने का अभी खास तरीका विकसित नहीं हुआ है क्योंकि इसके बीज के बाहर की खाल बहुत सख्त होती है और इसको सड़ने में अधिक समय लगता है। पौधशाला में तैयार करने के लिए इस के बीज को अक्तूबर में इकट्ठा किया जाता है। प्रीजरमीनेशन ट्रीटमेंट के लिए इन बीजों को गढ़े में तैहवार बिछाया जाता है। जहां पर पहले से ही ताज़ा गोबर रखा गया हो। बिजाई से पहले बीज की खाल को सड़ने के लिए काफी समय तक रखा जाता है। और फिर बुआई नवम्बर-दिसम्बर में या मार्च-अप्रैल के महीनें में पोलीथीन बैग में कर दी जाती है। बैग में मिट्टी का कुछ भाग जुनिपर के जंगल से, माइकोराईज़ा के लिए, लाना आवश्यक है। पौधों को चार-पांच साल तक पौधरोपण से पहले नरसरी में रखा जाता है।

देवीदियार बहुत उपयोगी वृक्ष है। इसकी भीतरी लकड़ी जल्दी नहीं सड़ती। इसलिए सूखे स्थानों में इसके तने को पानी ले जाने के लिए नाली के रुप में प्रयोग किया जाता है।

लाहौल जैसे शुष्क क्षेत्र में इसकी लकड़ी को बाइन्डरज़ और बीमज़ के तौर पर मकान बनाने के लिए

-किन्नौर में मन्दिरों को बनाने के लिए

- लद्दाख में जलाने और कोयला निकालने के लिए।

- इस के फलों में पाया जाने वाला विरोज़ा दवाईयां बनाने के लिए।

- बौद्ध लोग इसको पूजनीय मानकर देवताओं की स्तुति के लिए बतौर धूप के लिए करते हैं।

- लकड़ी जलाकर कई जगह माना जाता है कि इससे कई बीमारी जैसे ज्वर वगैरा ठीक होती है।

- कई जगह बर्तन बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

इस वृक्ष का पर्यावरण सन्तुलन में योगदान शब्दों में आंकना कठिन है। दुर्भाग्य से पिछले चन्द सालों में यह वृक्ष उपरोक्त अधिकांश स्थानों से मानवीय गतिविधियों के कारण विलुपत हो चुका है। अगर प्रयास न किया जाए तो यह स्थिति लाहौल घाटी में भी आने वाली है। प्रकृति के करोड़ों साल के अथक प्रयासों से इन ऊंचाईयों में रहने वाले जीवों और मानव की सुरक्षा के लिए इस वृक्ष का विकास हुआ है। आज पहली बार इस को मानव से ही खतरा उत्पन्न हो गया है। देखना होगा कि हमारी भलाई किस में है। इसको सुरक्षित रखने में या इसके विनाश में।

लाहौल जनपद के लोकगीतों में राग छाया

डॉ० सूरत राम ठाकुर

लोक संगीत की तीनों विधाओं में चाहे वह लोकवाद्य है चाहे लोकनृत्य और चाहे लोकगीत हैं। इनमें व्याकरण तो होता है परन्तु कलाकार उस व्याकरण से अनभिज्ञ होता है। लोकगीतों की शाश्वत परम्परा और धुनें श्रुति सिद्धान्त पर ही निरन्तर गतिशील रहे हैं। हालांकि समाज में समय-२ पर परिवर्तन होता रहता है। उसी परिवर्तन से लाहौल भी अछूता नहीं रहा है। यहां के लोकगीतों में साहित्य और स्वर परिवर्तित होते रहे हैं परन्तु उस परिवर्तन से यहां के लोक कलाकार हमेशा अनभिज्ञ रहे हैं।

आदि मानव ने जब प्रकृति को देखा, बच्चों के रोने, पक्षियों के कलरव, झरनों की रुणझुण एवं हवा की सांय-सांय जैसी प्राकृतिक ध्वनियों से मानव ने संगीत को सीखा है। लाहौल जनपद की लोकधुनें भी इन प्राकृतिक संगीत लहरियों के समस्वर रही हैं प्रेरणा लेती रहीं हैं। वास्तव में यहां के लोकगीतों में यहां के वासियों की वह सहज स्वाभाविक एवं प्राकृतिक अभिव्यक्ति रही है जिसमें घाटी का समस्त जीवन, सामूहिक सुख-दुःख, जय-पराजय, आशा-निराशा, आदि मुखरित हुई हैं।

लाहौल घाटी पूर्णतया प्रकृति के रहमोकरम पर रही है। फिर भी यहां के लोकगीतों में अन्य क्षेत्रों के गीतों की तरह सामाजिक रहन-सहन, दुर्घटना सम्बन्धी, प्रेम प्यार, धर्म सम्बन्धी, सांस्कृतिक पारिवारिक, लोकगाथा सम्बन्धी, एवं सौन्दर्य प्रधान लोकगीतों की झलक देखने को मिलती है। लाहौल जनपद अन्य क्षेत्रों से छः महीने अलग-थलग रहता है और यहां के लोग अपने क्षेत्र को ही अपना देश कहलाने में नहीं हिचकिचाते। अपने देश के प्रति आस्था, विश्वास और प्रगति के गीत भी यहां गाए जाते हैं।

लाहौली गीतों में संगीत

सांगीतिक दृष्टि से लाहौल जनपद के लोकगीत सरल एवं सीधे-सीधे स्वरों में ही गाए जाते हैं। अधिकांश लोकगीतों का आधार स्वर ऊंचा होता है। जिस कारण उच्च तारता लोकगीतों की विशेषता बन जाती है। यहां के लोकगीतों में प्रमुख स्वरों में अद्‌भुत लोच है। जो सीधे श्रोताओं की भावनाओं को स्पन्दित करते हैं। जिस प्रकार साम संगीत में उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित प्रकार के स्वरों का उल्लेख मिलता है और गाथिक, आर्क्षिक, सामिक गायन की परम्परा का वर्णन मिलता है, उसी प्रकार लाहौल जनपद में भी तीन स्वरों, चार स्वरों तथा पांच स्वरों के गीत बहुतायत में गाये जाते हैं।

वैसे देखा जाये तो जनपद के लोक गायकों का षडज एक जगह स्थित नहीं होता है। कभी वह ऊंची तारता में होता है तो कभी मध्यम तारता में।

लोक गाथाओं में स्वरों का क्रम अवरोही होता है। लाहौल की लोकगाथाओं का गायन वैदिक ऋचाओं की तरह ऊपर से नीचे के स्वरों की ओर भी होता है।

राग छाया :-

लाहौल जनपद के लोकगीतों में दुर्गा, भोपाली, जोग, पहाड़ी आदि रागों की छाया दिखाई देती है। भोपाली राग के सदृश कुछ लोकगीत इस प्रकार हैं :

गीत:

भाई साब जी केलांगा सेला-२
केलांग बिजली झिलिमीली-२
भाई साब जी केलांगा सेला-२
केलांगा हैन्दु राजधानी-।
भाई साब जी केलांगा सेला-।
ती तुन्नामी नलका तमाशा सानिमा लै ।
भाई साब जी केलांगा सेला-।

भावार्थ :-

लाहौल जनपद का मुख्यालय केलांग बहुत सुन्दर है। जहां बड़ी-२ कोठियां बिजली पानी आदि सब सुख सुविधाओं से परिपूर्ण हैं।

स्वरलिपि :-

स्थायी :-

सरे गग	*रे--*	*सरे ग रे*	*स - स ध*
भाई साब	*जी ऽ ऽ*	*केऽ लांगा*	*से ऽ लाऽ*
सरे ग ग	*रे - -*	*स रे ग रे*	*स - स*
भाई साब	*जी ऽ ऽ*	*कें ऽ लांगा*	*से ऽ ला*

अन्तरा :-

प प ऽ ध	सं ध प	ध प ग	ग - -
के लांऽगा	बिजली	झि ली मि	ली ऽ ऽ
स रे गग	रे - -	सरे ग रे	स- सध
भाई साब	जी ऽ ऽ	केऽ लांगा	सेऽ ला ऽ
स रे गग	रे- -	सरे ग रे	स - स
भाईसाब	जी ऽ ऽ	केऽ लांगा	से ऽ ला

शेष अन्तरे भी इसी प्रकार गाये जाते हैं।

इस गीत में स रे ग व ध स्वर ही प्रयुक्त हुए हैं। जैसे कि भोपाली राग में प्रयुक्त होते हैं। इसमें स्वर प्रधान स्वर हैं साथ ही ग और प स्वरों का प्रयोग भी बार-बार हुआ है।

इसी प्रकार एक अन्य गीत जिसमें यही स्वर प्रयुक्त हुए हैं। इस प्रकार है:-

गीत :-

गादी बाणे बाणे सेला चाल गादी हो-२
गादी धारे नाले सेला चाल गादी हो-२
गादी खोकू किसी चेलडू चाल गादी हो-।
गादी काला डोरा लाया चाल गादी हो-।
गादी नांगे पैरे सेला चाल गादी हो-।

भावार्थ :-

गद्दी जंगल जंगल भेड़ें चराते हुए चल पड़ा है। गद्दी धार नाले से होते हुए बगल में हुक्के को लेकर और कमर में काला पटका बांधे हुए वन वन चल पड़ा है।

स्वरलिपि :-

स्थाई :-

स ध र	स रे -	ग प -	ग रे
गा दी ऽ	बां णे ऽ	बां णे ऽ	से ऽ ऽ
स ध -	स - रे	ग रे -	स - -
ला ऽ ऽ	चा ऽ ल	गा दी ऽ	हो ऽ ऽ

इस के सभी अन्तरे स्थायी की धुन पर ही गाए जाते हैं।

लाहौल जनपद के अधिकतर गीतों में स्थाई और अन्तरा एक जैसे स्वरों पर गाए जाते हैं। जो धुन स्थाई की होती है वही धुन अन्तरा की भी होती है। इसका मुख्य कारण लाहौल वासी सरलता का जीवन व्यतीत करते हुए लोकगीतों को मनोरंजन हेतु गाते हैं। इसी कारण यह लोकगीत जनमानस में बड़ी जल्दी फैल जाते हैं।

यहां के बहुत से गीतों में राग दुर्गा की छाया परिलक्षित होती है। जिस प्रकार दुर्गा में स रे म प ध स्वर प्रयुक्त होते हैं, यहां के लोकगीतों में भी वे स्वर लगे हैं जैसे इन गीतों में है:-

गीत :-

रामा नामा के सुबा शामा नाम ले
रामा नामा के इज्जते वाला नाम ले
रामा नामा के हाउसा वाला नाम ले
रामा नामा के नाटीये वाला नाम ले
रामा नामा के मां बापू वाला नाम ले
रामा नामा के सुबा शामा नाम ले

भावार्थ :-

इस गीत में राम नाम लेने को प्रेरित किया गया है कि सुबह शाम सभी को राम का मनन करना चाहिए। मनुष्य चाहे अच्छे मकान में रहता हो चाहे वह इज्जत वाला हो, चाहे वह नाचने वाला हो चाहे वह अमीर और गरीब हो। सभी को राम का भजन सुबह शाम करना चाहिए।

स्वरलिपि :-

पम -	रे स -	रे-मप-	ध प -	प - म	म - -
रा मा	ना मा	के ऽ सुबा	शा मा	ना ऽ मा	ले ऽ ऽ

गीत :-

रेबक पौरी जाणा हो,
मेरा सांगा डोलमा।
तीनन छेशु जाणा हो,
मेरा सांगा डोलमा।
केलंग जलसा जाणा हो,
मेरा सांगा डोलमा।
दीया छोनमें करना हो,
मेरा सांगा डोलमा।

भावार्थ :-

इस गीत में नायिका डोलमा को सम्बोधित किया है कि डोलमा के साथ त्रिलोकनाथ के मेले में जाना है और उसके साथ गून्धला के मेले में तथा केलंग में होने वाले जलसे में भी जाना है। त्रिलोकनाथ

के मेले में भगवान त्रिलोकनाथ को दीया भी भेंट करना है।

स्वरलिपि :-

स्थायी :-

म म ध -	। सं - ध- ।	प-ध- । प ---	
रे व का ऽ	। पो ऽ री ऽ ।	जा ऽ णा ऽ ।	हो ऽऽऽ
सं म ध-	। सं- ध - ।	प-म- ।	म ---
मे ऽ रा ऽ	। सां ऽ गा ऽ ।	डो ऽ लाऽ ।	माऽऽऽ

शेष अन्तरे भी इसी तरह गाये जाते हैं।

उपरोक्त दुर्गा राग के स्वरों जैसे गीतों में षड्ज़, मध्यम और पंचम स्वरों की प्रधानता रही है। इनमें कई गीतों में प स्वर, कई में म स्वर पर न्यास हुआ है। एक अन्य गीत जिसमें स्थायी और अन्तरा की धुनें अलग-अलग हैं। इन्हीं स्वरों पर आधारित है।

यथा :-

गीत :-

आमो ता चुन्ग हेन्दु स्वर्गा बे रुठे।
आईयों ओईतारे चुन्ग कुट्रा आपी।
चुन्ग पिचे यवांताई भते पेश्रा।
ओ ओ यवांताई भते पेश्रा।
सोई-२ रंग-ती रन्ड्रा
अयों ओईतारे चुन्ग कुट्रा आपी।
चुन्ग पिचे यवांताई भत्ते पेश्रा।
ओ ओ यवांताई भत्ते पेश्रा।

भावार्थ :-

धरती मां जो हमें अन्न देती है और वह मां जो हमें जन्म देती है, यह दोनों स्वर्ग से भी सुन्दर हैं। घर से दूर जब होते हैं तो घर की बहुत याद आती है। परन्तु जब घर पहुंचते हैं तो सब कुछ भूल जाते हैं। रोहतांग के पार ठण्डी-ठण्डी हवा के झोंकों को भी घर पहुंचने पर भूल जाते हैं।

स्वरलिपि :-

स्थायी :-

स स रे	। म मम मे ।	म प म ।	रे-रे।
आ योता	। चु ग हेन्दु।	स्वर्गा वे।	रु ठे।
ससरे-	म-म	म म म मो	रे - रे
आयो ओं ऽ	ता ऽ रे	चुं ग कूट्रा।	आऽ पी

अन्तरा :-

धध ध ध	। पद धध म	। रे प -	म -- ।
चुं ग पि चे	। य व ता ई भ	। ते पे ऽ ।	श्रा -- ।
ध ध	पप धध म	। रे प - ।	म --।
ओ ऽ ओ	। यव ताई भा	। ते पे ऽ ।	श्रा ऽ ऽ ।

शेष अन्तरे भी इसी प्रकार गाये जाते हैं।

इसी तरह एक अन्य गीत जिसमें कोमल ग और कोमल नि प्रयुक्त हुए हैं।

गीत:-

ईका दिना मारी जाणा संगलसी
सारा छोड़ी जाणा हो।
ईका दिना मारी जाणा हो,
मांए बापू छोड़ी जाणा हो।
ईका दिना मारी जाणा हो,
भाई बन्धू छोड़ी जाणा हो।
ईका दिना मारी जाणा हो,
भाई बहणा छोड़ी जाणा हो।
ईका दिना मारी जाणा हो,
ऐसा हो ज़िन्दगी छोड़ी जाणा हो।

भावार्थ :-

यह ज़िन्दगी आज मेरी है कल नहीं हो सकती। अर्थात् जो हम आज है एक दिन हम सबने इस जगत को छोड़ के जाना है। मां, बाप, भाई, बहन, बन्धु बांधव,बुजुर्ग सबको छोड़ कर जाना है।

स्वरलिपि :-

स्थायी :-

स रे मग ।	स- - नि	। प - प-		
इ कादिना।	मा ऽ ऽ री	। जा ऽ णा।		
स रे मग ।	स - - स	। रे - स नि़	। प़ - नि़ ।	स - - -
सं ग ला सई	। माऽऽ रा	। छो ऽ ऽ ड़ि	। जा ऽ णा।	हो ऽऽऽ

शेष चरण भी इसी तरह गाए जाएंगे।

लाहौल जनपद के लोकगीतों में कहीं कहीं मींड़ का अनायास

प्रयोग हुआ है। हालांकि लोकगायकों को मींड़, कण, मुर्की आदि विधाओं का ज्ञान नहीं होता। एक गीत में मींड का बड़ा सुन्दर प्रयोग इस प्रकार हुआ है।

गीत :-

ठण्डा पाणी ओ पमो ठण्डा पाणी ओ,
सैपीति देशा ठण्डा पाणी ओ।
साहवे आया ओ पमो साहवे आया ओ,
सैपीति देशा साबे आया हो।
जुले किया हो पमो जुले किया हो,
सैपीति देशा जुले किया हो,
आरा तून्ना के पमो आरा तून्ना ओ,
सैपीति देशा आरा तून्ना ओ।
जीपा आया ओ पमो जीपा आया ओ,
सैपीति देशा जीपा आया ओ।

भावार्थ :-

पमो नायिका को सम्बोधित करके कहा है कि स्पिति के देश में ठण्डा पानी होता है। जब कोई बड़ा अफसर आता है तो उसे नमस्कार करना है और लुगड़ी पीकर मस्त रहना है। अब तो यहां गाड़ियां भी आने लगी हैं।

स्वरलिपि :-

स स -। स म - । प --। नि नि - । प म - । प म - । म - - । स - -
ठं डा ऽ। पाणीऽ। हो ऽऽ। पमो ऽ। ठं डा ऽ । पाणी ऽ । हो ऽऽ । ऽऽऽ
म-प।-प-म-स । म - - । प म - । प म - ।म - - । - - -
से ऽ पी । ऽ ति ऽ । दे ऽऽ। शा ऽऽ । ठं डाऽ। पाणी ऽ। हो ऽऽ।ऽऽऽ

शेष :- चरण भी इसी प्रकार गाये जाते हैं।

प्रस्तुत गीत में कोमल नी स्पष्ट रूप से लगता है। जबकि कोमल ग म स को प? मींड़ में ही छुपा गया है। प ग की स्वर संगति बार बार प्रयुक्त हुई है।

लाहौल जनपद की पट्टन घाटी में लोकगाथाओं को गाने की परम्परा भी प्रचलित है। ये गाथाएं गद्दी संस्कृति के काफी नज़दीक है। गाथाएं तीन या चार स्वरों में ही गाई जाती है।

एक गाथा इस प्रकार है:-

गीत :-

गाछे हो भीमा गाये सुआणे-२
पांडू री भीमा नंगे पैरे दौड़ी।
गाछे हो भीमा गाये सुआणे।।
पांडुरी भीमा पुरूबल्ला खुण्डे।
पुरूबल्ला खुण्डे गाये सुना ए।।
पांडु री भीमा दखाणा खुण्डे।
दखणा खुण्डे गाये सुना ए।।
पांडु री भीमा उतरा खुण्डे।
उतरा खुण्डा गाये सुना ए।।
पाण्डु री भीमा पछमा खुण्डे।
पछमा खुण्डे गाये सुना ए।।
पांडुरी भीमा विंद्रा बाणे।।
विंद्रावणे गाये सुआणे।।

भावार्थ :-

यह गाथा उस वक्त का वर्णन करती है जब पाण्डवों के पिता पांडू की मौत हो जाती है और उनका क्रियाकर्म करने के लिए पुरोहित भीम को गाय लाने भेजता है। भीमनंगे पैर उत्तर-दक्षिण, पूर्व, पश्चिम चारों दिशाओं में दौड़ता है परन्तु उसे कहीं भी गाय नहीं मिलती। अन्त में जब वह विन्द्रावन में जाता है तो वहां उसे गाय मिलती है जिसे वह अपने पूज्य पिता के क्रियाकर्म के लिए ले आता है।

स्वर लिपि :-

रे स रे । स - । प - । प रे स । स - । - स-
गा छे हो। भी ऽ । मा ऽ गा येसू । आऽ । णेऽ

शेष पंक्तियां भी इसी प्रकार गाई जाती हैं।

एक अन्य लोक गाथा जिसमें चार स्वर प्रयुक्त हुए हैं, में स रे म ध चार स्वर प्रयुक्त हुए हैं।

गाथा :-

जला थला हे जला कुभां भूयी जीयो।
ईशारो महादेवी क्या दोहरा कीती जीयो।।
जला ऊपरुए महादेवी रिशी री जीयो।
तेता ऊपपरुए कन्या कुमारी जीयो।।
तेता ऊपपरुए गुगुला तांबे जीयो।

तेता ऊपपरुए बैलाना बाछी जीयो।।
तेता ऊपपरुए तांबे री धरती जीयो।।
तेता ऊपपरुए संगली संसार जीयो।
ईशारा महादेवी क्या दोहरा कीती जीयो।।
सोना खाई रे रीं मण्सागा डाही जीयो।।
दूरा जाई ए हाका लागा देणे जीयो।
नं कीति हुइयें न की अंगारे जीयो।
ईशरो महोदवे गोबू रा ढोई जीयो।
गोबरा ढोईये धूणी जा गाही जीयो।
धूणी जागाई छार बणाई जीयो।।
छारा खाईये रा मण्सागा डाही जीयो।।
छारे री माणहू रा काना छाड़ी जीयो।।
दूरें जाइये हाका लागी देणे जीयो।
इशरो महादेवे पृथ्वी रचाही जीयो।।

भावार्थ :-

इस लोकगाथा में भगवान महादेव द्वारा पृथ्वी की रचना का वर्णन हुआ है कि किस प्रकार यह पृथ्वी जलमग्न थी, फिर महादेव ने जड़ चेतन पेड़-पौधे बनाये, तत्पश्चात पशु-पक्षी पैदा किया और अन्त में मानव की रचना की।

स्वर लिपि :-

रे स ध - । स - स रे । मम - रे ध । स - स स।
ज ला थ ऽ । लाऽ हे ज ला कुं भाभू । ई ऽ जीयो।

शेष प्रक्तियां भी इसी प्रकार गाई जाती हैं।

कुछ गीत ऐसे भी हैं जिनमें न्यास पंचम स्वर या मध्यम स्वर पर होता है। जैसे निम्न गीत में पंचम स्वर पर न्यास हुआ है।

गीत :

गोतू विचंग गयू देश होला ओ-२।
गयू सेम लेती स्वंगलां हो।।
तिंगी-२ जरीमा स्वंगला होला ओ।
गयू सेम लेती स्वंगलां हो।।
आड्र चन्द्रमुखी जंङ मुल होला ओ।
गयू सेम लेती स्वंगला हो।।

भावार्थ :-

इस गीत में लाहौल जनपद की सुन्दरता का वर्णन हुआ है। लोक कवि कहता है कि मेरा दिल लाहौल में लग गया है। लाहौल जो पहाड़ों के मध्य में स्थित है, जहां नीले नीले गलेशियर हैं। जहां चन्द्रमुखी आलू पैदा होता है। मेरा दिल यहां बस गया है :

स्वरलिपि :-

ध - - ध । ध प म रे । प - - । प म रे ।
गो ऽ ऽ तू । वि चं गयू । दे ऽऽ शा । हो ऽ ला हो।
प प प प । प म रे स । स - रे म । प - - -
ग यू से म । ते ऽ ती ऽ । स्वां ऽ ग ला । हो ऽऽऽ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लाहौल जनपद के लोकगीतों में सरलता है। सीधे-सीधे स्वरों में गाये जाने वाले लाहौल जनपद के लोकगीतों में तीन चार और पांच स्वरों का चलन अधिक रहा है।

लयः-

यह पूर्ण जगत ही एक निश्चित लय में गतिमान है। प्रकृति का हर काम गति में होता है। लाहौल के लोकगीतों की खूबसूरती इनकी लय बद्धता है। अधिकांश लोकगीत दादरा, कहरवा, खेमटा और रूपक ताल में निबद्ध हैं। तालों के कोई नाम और निश्चित बोल नहीं हैं।

वास्तव में किसी भी क्षेत्र का लोकसंगीत वहां के जनमानस की प्रेम अभिव्यक्ति को प्रकट करते हैं। लाहौल जनपद तो संगीत में हमेशा सराबोर रहता है। उठते-बैठते, काम करते, विवाह-शादियों आदि में हर समय संगीत की उपस्थिति रहती है। अन्त में यह कहा जा सकता है कि लाहौल जनपद की पहचान यहां के लोक संगीत में स्पष्ट देखी जा सकती है तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

बुढ़ापा

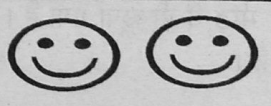

एक बहरा व्यक्ति अपने बीमार दोस्त का हाल पूछने गया।

दोस्त बोला-क्या बताऊं भाई, बुढ़ापा खुद एक बीमारी है।

बहरा-हां भाई, बड़ी भयानक बीमारी है। हमारे मुहल्ले में कई बच्चे इस बीमारी से मर चुके हैं।

स्वंगला मूल्यों का उद्‌भव या ह्रास

सितम्बर के प्रथम सप्ताह में हुई भारी वर्षा के कारण लाहुल का शेष दुनियां से सम्पर्क तो कट ही गया साथ में वादी के बीच भी सम्पर्क खत्म हो गया। सभी नालों मे बाढ़ आ गई। बहुत से नए नाले बन गए तथा सड़कें भूस्खलन तथा चट्टानों के गिरने के कारण अवरूध हो गई। बहुत सारी उपजाऊ मिट्टी ढलानों से गिर-गिर कर चन्द्रभागा में बह गई। ऐसे समय में घाटी में अपर्याप्त कुलियों तथा खराब मशीनरी के कारण ग्रेफ तथा पी०डब्लयू० डी० ने हाथ खड़े कर दिए। तब सहकारिता, समन्यवता व संगठन का दीप जल उठा और स्वंगला वासी अपनी बलिष्ठ भुजाओं में एक बार फिर कृषि औज़ार थाम ग्राम के ग्राम श्रमदान करने उमड़ पड़े और प्रकृति ने भी इनकी एकाग्रता, लगनता व आपसी भाईचारे को देखकर अपना सीना खोल दिया और तब जनता ने जी तोड़ मेहनत करते हुए सड़कों को यातायात के लिए खोला। इस सारे प्रकरण में जहां स्वंगला मूल्यों का उद्‌भव हुआ वहीं प्रजातंत्र मूल्यों के ह्रास, स्वार्थपरता व एक दूसरे से होड़ की भावना नज़र आई। आज स्वार्थ, अहम, वैमनस्य, आवेश और असंयम का रोग समाज में पनप रहा है। इसे दूर करने के लिए व्यक्तिगत जीवन में सद्‌गुणों के अभिवर्धन की साधना निरन्तर करनी पड़ेगी और साथ ही अन्तंरग में छिपे हुए दोष, दुर्गुणों से जूझना पड़ेगा। यदि इन कुसंस्कारों का उन्मूलन न किया जाए तो सदगुण पनप ही न सकेंगे और सारी शक्ति इन काषय-कल्मषों में ही नष्ट होती रहेगी। ऐसे में हम एक सुदृढ़ व नैतिक मूल्यों से भरपूर समाज की कल्पना कैसे कर पाएंगे। आज ज़रुरत है ज़ाति ज़िन्दगी की अपेक्षा इकलाखी सोच को अपनाने की ताकि हम उस स्वंगला की कल्पना कर सकें जहां निस्वार्थता, सहकारिता और आपसी भाईचारा समाज की परम्पररा थीं, जीवन शैली थी न कि, प्राकृतिक विपदा से उत्पन्न हुई प्रासंगिक जनचेतना। आज ज़रुरत है उन शक्तियों की जो सामाजिक स्तर पर चिन्तन मनन करते हैं और हमें उम्मीद हैं कि ऐसी शक्तियां आगे आएंगी और समाज की समग्र उन्नति में अपने सुलझे विचारों से योगदान देगी।

फोटो बाढ़ का

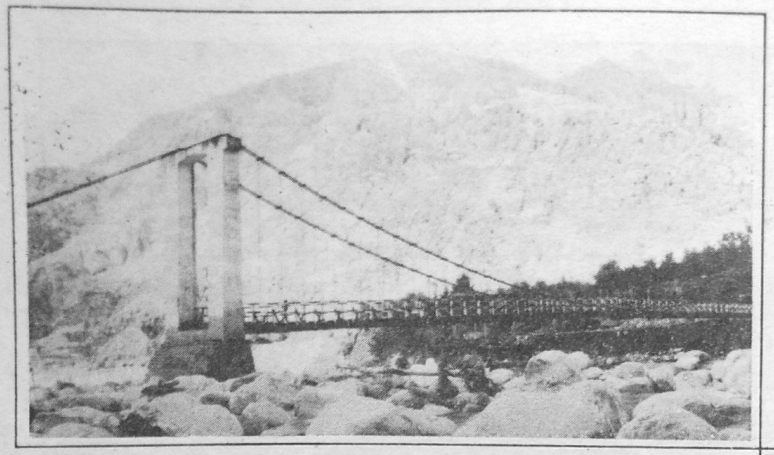

3 सितम्बर को प्रकृति ने जब अपना रोद्र रूप बाढ़ की शक्ल में दिखाया जो कहर बन कर सोंलग नाला से होते हुए पूरे कुल्लू वादी में छा गई। जब भी प्रकृति के नियम को ज़रूरत से ज़्यादा तोड़ा जाता है तो यह अपना संतुलन खो देता है जिसे बाढ़, सूखा,

नेहरु कुण्ड का पुल जहां से विनाश लीला शुरु हुई

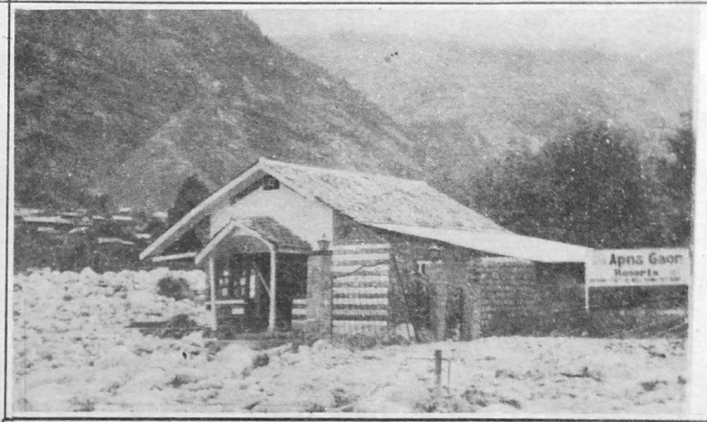

आलू ग्राऊंड बाज़ार में बाढ़ द्वारा तहस नहस।

अपना गांव, बांग में बाढ़ का कहर।

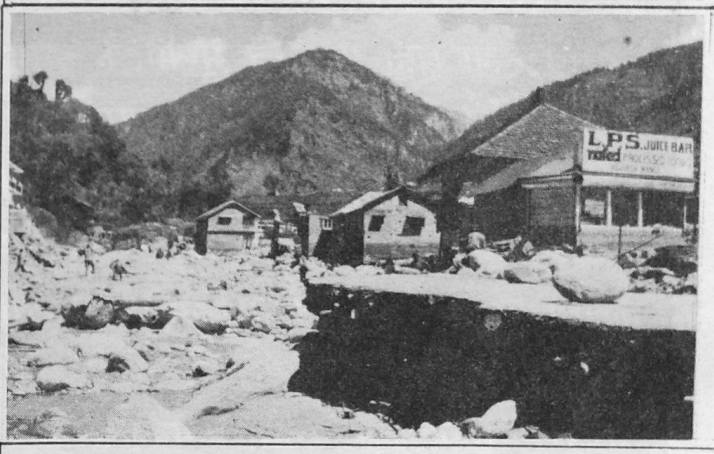

17 मील में बाढ़ सड़क तोड़कर घर के आंगन तक आ गई।

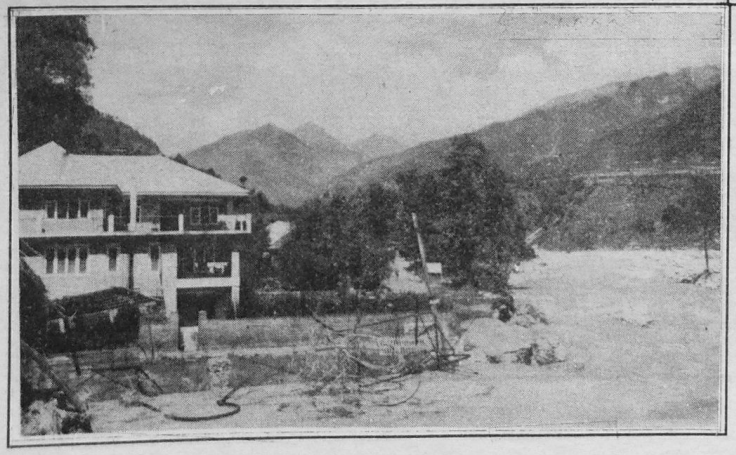

भूस्खलन, हिमस्खलन और आंधी तूफान के रूप में हम देखते ही आए हैं। लेकिन मानव की स्मरण शक्ति बहुत ही कम लगती है खासकर विपदा आने के बाद वह भूल जाता है कि वह अभी विपदा से निकला है। वे तो फिर उसी लग्न से स्वार्थ के निहित प्रकृति का दोहन उसी गति से करता जाता है। आज लाहौल व कुल्लू

फीचर
कहर

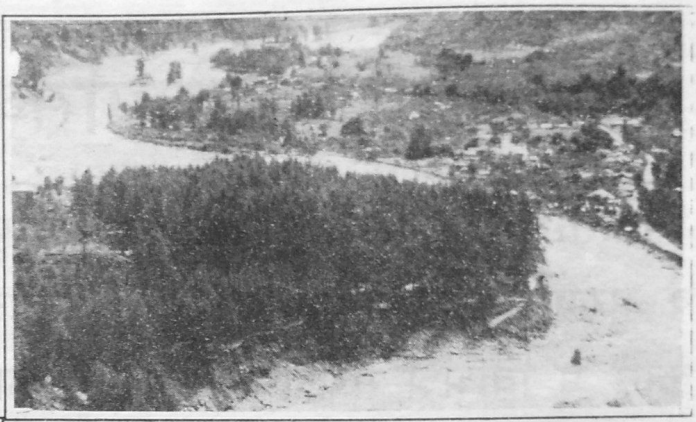

तहसील में निरन्तर बाढ़ व भूस्खलन का प्रकोप प्रकृति का अवैज्ञानिक ढंग से दोहन होने के कारण हो रहा है। इन्हीं वादियों में नकदी फसल और पर्यटन का बोलबाला है। जिससे प्रकृति पर इनका प्रभाव निस्देह पड़ता ही है। मानव का कलियुगी प्रवृति कि धन व वैभव ही जीवन का

पनग्रां से बटाहड़ पुल, 15 मील, स्पैन रिज़ोर्ट का विहंगम दृश्य जहां बाढ़ ने विनाश लीला मचाई।

बड़ग्रां नाले से पतली कुहल में बाढ़ के कहर का दृश्य।

कैपिंग साईट रायसन में क्षतिग्रस्त सड़क व टूटे मकान का दृश्य

मनीकरण को जोड़ने वाला भुन्तर पुल। बाढ़ के प्रकोप का मौन साक्षी

आधार है जो उसे एक दूसरे से आगे निकलने की होड़ में डाल देता है जिससे लोभ, घृणा, स्वार्थ व वैमन्स्य का आधार बढ़ता है। आपसी भाईचारा, सद्भाव व धार्मिक मान्यताओं का आधार घट रहा है। आज मानव को प्रकृति के इस इशारे को समझना चाहिए कि उसके जीवन की क्या प्राथमिकताएं होनी चाहिए और उसे क्या दिशा पकड़नी है?

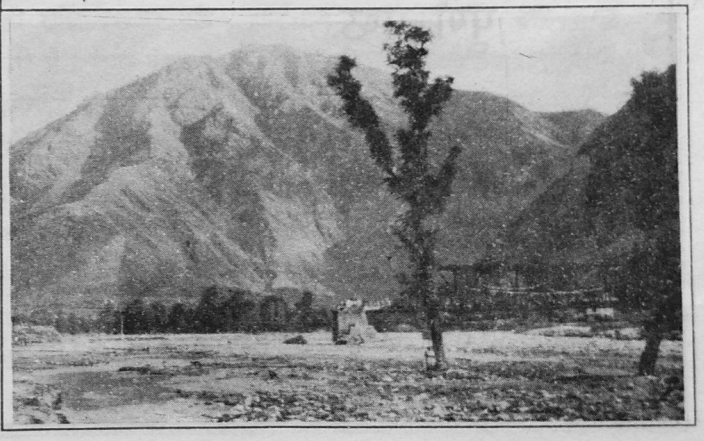

-डॉ० पी० पी० कायस्था

चन्द्रताल त्रैमासिक में विज्ञापन दें।

'चन्द्रताल' त्रैमासिक जिसका वितरण पूरे भारतवर्ष में हो रहा है। इस पत्रिका के मुख्य पाठक लाहौल स्पीति ओर कुल्लू से सम्बन्ध रखते हैं जो देश के कोने कोने में विभिन्न सरकारी व गैर सरकारी पदों पर कार्यरत हैं। इसके इलावा मनाली जो कि अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन स्थल है वहां पर इसका वितरण व्यापक तौर पर है। इसके इलावा इस पत्रिका के पाठक उन्नत व प्रगतिशील बागवान और कृषक भाई हैं। इस तरह 'चन्द्रताल' त्रैमासिक में अपना विज्ञापन देकर अपने उत्पादन और व्यवसाय को बढ़ाएं।

'चन्द्रताल' की विज्ञापन दरें

आवरण (भीतर पृष्ठ)	1000-00
बैक कवर	1500-00
बैक कवर (भीतर पृष्ठ)	1000-00
पूर्ण पृष्ठ	800-00
अर्ध पृष्ठ	500-00
चौथाई पृष्ठ	250-00
शुभ कामनाएं	100-00

तिब्बती चिकित्सा पद्धति-एक सर्वेक्षण

डॉ० रंधीर सिंह मनेपा,

तिब्बती चिकित्सा पद्धति आज से 2500 वर्ष पहले शाक्यमुनि द्वारा स्थापित है। शाक्यमुनि का आश्रम वाराणासी के निकट था। हमारे देश से ही यह चिकित्सा पद्धति तिब्बत के विद्वानों ने ग्रहण की। यह एशिया महाद्वीप के अत्यन्त प्राचीन प्रणालियों में एक महत्वपूर्ण है।

भोट विद्वानों की मान्यता यह है कि तिब्बती आयुर्विज्ञान का इतिहास तिब्बत के राजा ल्हा-थो-री-चेम्पा तीसरी से पांचवी शताब्दी के बीच से प्रारम्भ होता है।

यह दिलचस्प संयोग ही है कि तिब्बती आयुर्विज्ञान के जन्मदाता एक भारतीय चिकित्सक जिसका नाम विजय गाची था। उनकी शादी तिब्बत के राजा ल्हा-थो-री चेम्पा की कन्या हिद-की-रोल्छा के साथ हुई। उन दोनों के संसर्ग में एक बालक ने जन्म लिया। उसका नाम द्रंग-गी-थोर-छोग था। बचपन से ही इस राजकुमार ने अपने भारतीय चिकित्सक पिता की भान्ति चिकित्सा पद्धति आरम्भ की और सभी विद्याओं में प्रवीणता अर्जित कर, राजा ल्हा-थोरी-चेम्पा और उनके पुत्र ठी-तन-जुगचन के राजचिकित्सक बने।

युथोग योन्तन गोम्पो ज्ञीडिमा व युथोग सरपा जो भोट देश के प्रख्यात चिकित्सक हुए हैं,उक्त चिकित्सक द्रंग-गी-थोर-छोग के वंशज माने जाते हैं। परम पावन दलाई लामा जी के निजी चिकित्सक डाक्टर यीशे दोन्देन व लेडी डाक्टर डोलमा के मतानुसार भोट चिकित्सा का इतिहास तिब्बत के प्रथम राजा ञठी चम्पो 127 ई० पूर्व के चिकित्सक विजय गाची से आरम्भ होता है। विजय गाची के बाद थो-थोग-ची उनके उत्तराधिकारी बने। और उनकी लम्बी परम्परा में सोङचन-गम्पो के राजकाल में युथोग योन्तन गोम्पो हुये। जिन्होनें तिब्बत के चिकित्सा इतिहास में बडा नाम कमाया।

मुठी चम्पो के समय तिब्बत में योन्तन नोरसंग राजा के निजी चिकित्सक के प्रयास से शल्य चिकित्सा का भी प्रचलन हो गया। परन्तु रानी की शल्य चिकित्सा करते समय नोरसंग द्वारा किया गया चीरफाड घातक सिद्व हुआ

तिब्बत के राजा ठ्रि-सोङ-दे-चन के राजगद्दी सम्भालने के उपरान्त उनके मन मे तिब्बत में चिकित्सा प्रचार करने की आवश्यकता महसूस हुई। तदुपरान्त अपने मन्त्रियों से विचार विमर्श करके पडौसी देश के कुशल चिकित्सकों को आमन्त्रित किया।

भारत से शान्ति गर्व।
काश्मीर से गुहया बैंजरा।
चीन से तोन्सम गंगवा
हाशांगवाला और हांगटी पाता।
नेपाल से धमीशाला आदि थे।

इनकी सबकी परीक्षा के लिये राजा ने सबको एक कमरे में बिठाया और स्वंय अन्य कमरे में बैठ गये। जाने से पूर्व राजा ने कहा कि आप लोग मेरी नाडी राशि देखकर कहें कि मुझे कौन सी बीमारी है। ऐसा कहकर राजा दूसरे कमरे में चले गये और कमरे में जाकर अपने शरीर पर रस्सी बांधने की बजाय बिल्ली के पैर में बांध दी। चिकित्सकों के द्वारा परीक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि राजा की नाडी बिल्ली के नाडी के समान है। और उन्होनें कहा कि राजा की जान खतरे में है। इसके पश्चात फिर मुर्गी के पांव पर रस्सी बांधकर परीक्षण करने की सलाह दी। उनको फिर मुर्गी के नाड़ी जैसी ही अनुभूति हुई और उन्होनें कहा कि राजा मुंह पटक रहा है। अन्त में सही तरीके से स्वयं अपने हाथ देखने की सलाह दी। तत्पश्चात चिकित्सकों ने सही रोगों की पहचान की। प्रो-नमखई नोरबू का कथन है कि तिब्बती चिकित्सा एवं ज्योतिष विद्या बौद्ध धर्म की देन है। बौद्ध अनुयायी यह दावा करते हैं कि तोन्पा-शे-रब के प्रथम पुत्र ने ही तिब्बत में सर्वप्रथम औषधि विज्ञान का सूत्रपात किया था। शायद तिब्बत में बौद्ध धर्म के प्रवेश से पूर्व कोई अपनी चिकित्सा पद्धति रही होगी। भारतीय आयुर्विज्ञान भी ल्हा-थोरी के समय तिब्बत में पहुंच चुका था और तिब्बती चिकित्सकों का भारत में आगमन शुरू हो गया था। युथोग योन्तन गोम्बो ज्ञीडमा के भारत आगमन का समय विवादास्पद है। एक स्त्रोत के अनुसार यह चिकित्सक स्रोङचन-गम्पो सांतवी शताब्दी के पूर्वाद्व के समय भारत आये थे। जबकि अन्य वृतान्त के अनुसार उन्हें ठ्रि-स्रोङ-दे-चेन आठंवी शताब्दी का समकालीन बताया गया है। वह तीन बार भारत आये और पंण्डित चन्द्रभि और अग्निचन्द्र आदि आचार्यो से चतुष्तन्त्र का सम्पूर्ण भाष्य सहित सीखा। उन्होनें चीन की भी यात्रा की और तिब्बत लौटकर भोट चिकित्सा पद्धति का प्रचलन किया। उन्होनें पल-दन-ग्युद-शी यानि चार तन्त्र वाली मेडिकल किताब लिखी। वह तिब्बत में इतने प्रसिद्व चिकित्सक हुये कि उन्हें भैषज गुरू के रूप में पुकारा जाने लगा। युथोग ज्ञीडमा की परम्परा में एक और तिब्बती दिग्गज चिकित्साविद यु-थोग-योन्तन गोम्पो सरपा तैरहवी शताब्दी में हुये जिन्होनें छः बार भारत की यात्रा की। ऐसा कहा जाता है कि उन्होनें चरक और योगिनी श्रीमाला से सम्पूर्ण आयुर्वेद सीखा और उनकी ख्याति चारों

दिशाओं में फैल गई। उन्होनें चिकित्सा विज्ञान के कई ग्रन्थों की रचना की परन्तु चतुष्तन्त्र की व्याख्या छः-लग-चो-ग्यद उनकी सबसे महत्वपूर्ण कृति मानी गई है। इसके सम्बन्ध में यह उल्लेख करना असंगत न होगा कि यु-थोग-योन्तन-गोम्पो सरपा का चरक से चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन अतिश्योक्ति मात्र है। क्यों कि चरक का काल काफी पहले आता है। तथापि यह हो सकता है कि तिब्बती चिकित्सा ने किसी चरक परम्परावादी-भारतीय चिकित्सा शास्त्री से अध्ययन किया हो।

तिब्बत में भैषज गुरु बुद्ध (संगे मन ला) को चिकित्सा विज्ञान का आदि स्त्रोत माना जाता है। इनके हाथ में त्रिफल हरड,बरड,आमला अरु वरु, क्यरु रहता है। बौद्ध दर्शन की मान्यता है कि इस कल्प में शाक्यमुनि बुद्ध ने ही आयुर्विज्ञान की नींव रखी है। भोट चिकित्सा भगवान बुद्ध द्वारा उपादिष्ट चतुष्तंत्र-ग्युद-शी पर आधरित है। इन चारों तन्त्रों को पीढ़ी दर पीढ़ी गुरु-शिष्य परम्परा के अनुसार एक अविच्छिन क्रम से वर्तमान पीढ़ी तक पहुंचाया गया है। भारत में इन तन्त्रों को ग्रहण करने वाले व्यक्तियों में नागार्जुन और आर्यदेव थे। तिब्बत में इन चिकित्सा तन्त्रों को पदमसंभव (8वीं शताब्दी के समय लाया गया था) विज्ञान के हर छात्र को इन तन्त्रों को रटना पड़ता है। इन तन्त्रों में चिकित्सा पद्धति की आठ शाखाओं का वर्णन किया है।

भगवान बुद्ध ने 84000 रोगों का इन तन्त्रों में उल्लेख किया है। जिन्हे आर्यबोधिसत्वों द्वारा ही पूरी तरह समझा जा सकता है। उन्होनें 18 संक्रामक रोगों का भी जिक्र किया है।

इसके अलावा इन चिकित्सा तन्त्रों में बीमारियों की 404 किस्में बताई गई हैं। भोट विद्वानों द्वारा भारतीय चार आधारभूत तन्त्रों के अलावा कई और पुस्तकें भी लिखी गई हैं। इनमें से सबसे प्रसिद्व ग्रन्थ वेन्दुरीया डोन्पो है जो कि चतुष्तन्त्र का भाष्य है। इसका सम्पादन एवं संशोधन सर्व प्रथम यू-थोन योन्तन गोम्पो सरपा द्वारा किया गया है। बाद में संगे ग्याछो 1653-1705 ने इस ग्रन्थ को पुनः परिवर्धित किया। इस ग्रन्थ में 156 अध्याय है और 5900 शाखा है,जो कि चिकित्सा का आठ शाखाओं में वर्णन करते हैं। संस्कृत के अनेक, चिकित्सा शास्त्रों का अनुवाद भी तिब्बती में उपलब्ध है। जिनमें वाङभट द्वारा रचित अष्टागुहदय संहिता सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। रस सिद्वान्त शास्त्र, आयुर्वेदसर्व,आर्य नागार्जुन भाषित भैषज-कल्प, सर्वेश्वर रसायन सर्व रोग हर सरिता पुष्टि शास्त्र आदि कुछ ऐसे संस्कृत ग्रन्थ है जो कि तिब्बती में भोटी अनुवाद के रुप में उपलब्ध है। परन्तु भारत में उनके मूल इस समय लुप्त है।

भोट पद्वति भारतीय चिकित्सा विज्ञान की तरह आयु का विज्ञान है न कि किसी रोग विशेष का विज्ञान। तिब्बती चिकित्सा शास्त्र समग्र मानव के शरीर के स्वास्थ्य पर अधिक बल देता है। यह पद्वति आयुर्वेदिक की तरह शरीर को एक अविभाज्य सत्व के रुप में पहचानती है। वह किसी अवयव विशेष का उपचार नहीं करती बल्कि एक समूचे मानव के स्वास्थ्य को परिरक्षित करने की चेष्टा करती है।

महाअनुवादक तासांग के मतानुसार नाड़ी और जल के परीक्षण की विधि आर्य देश भारत से नहीं बल्कि यह शास्त्र स्वंय तिब्बत के बोधिसत्व द्वारा रचित है। (युथोग 708 से 833 शताब्दी के समय में हुआ।)

युरोप के प्रसिद्ध चिकित्सक, विशेषज्ञ और शरीर विज्ञानी जैसे नार्मन, कजनज, बरनार्ड जेन्सन थामस वर्ने, रोजर, कापरा आदि भी महसूस करने लगे और उन्होंने परीक्षणों द्वारा सिद्ध भी कर दिया है कि किसी रोग पर काबू पाना इस बात पर निर्भर करता है कि रोगी का अपनी बीमारी के प्रति कैसा रवैया है। यदि रोगी के मन में आशा और प्रत्याशा की भावना जागृत की जाती है, तो उसका शरीर बिगड़े हुए सन्तुलन को ठीक करने की दिशा में अग्रसर होता है और इस प्रकार रोगी की परिवर्तित मनोदशा एवं स्वभाव मस्तिष्क के रसायन पर गहरा प्रभाव डालते हैं। जिससे रोग पर नियन्त्रण पाया जा सकता है।

रोग के कारण

तिब्बती चिकित्सकों के अनुसार रोग के कई कारण हो सकते हैं। सर्वप्रथम यह मान्यता है कि हम अपने पूर्व जन्म के कर्मों के कारण ही रोग ग्रस्त होते हैं यदि हमने अपने पूर्वजन्म में हिंसा, चोरी, झूठ और अन्य किसी प्रकार का प्रमोद किया होगा, तो यह सारे कुकृत्य हमारे वर्तमान जीवन में एक विशिष्ट रोग के रुप में प्रस्फुटित होगें।

भोट चिकित्सकों पंडितों का विश्वास है कि यदि हम पिछले जन्म में द्वेष, वैमनस्य अंहकार जैसे रोग के शिकार थे, तो हमें इस जन्म में रुधिर जन्य और पित्तजन्य रोगों से पीड़ित होना पड़ेगा। इस प्रकार उक्त पारलौकिक कारणों से उत्पन्न रोग के मुख्य तीन कारण बताए जाते हैं। जो भारतीयआयुर्विज्ञान के अनुरुप वात पित्त व कफ अर्थात त्रिदोष के नाम से जाना जाता है। भोट चिकित्सा विशेषज्ञों ने त्रिदोष को आगे श्रेणियों में विभक्त करते हुए, वात, पित्त व कफ के पांच-२ प्रभेद बताए हैं। इसके अतिरिक्त खान-पान की गलत आदतें रहन-सहन के दो पूर्ण तरीके तथा प्रतिकूल आचार-विचार भी रोग के कारण माने जाते हैं। परन्तु त्रिदोष को समझे बिना रोग निदान और उपचार कर पाना लगभग असम्भव हो

जाता है। भारतीय आयुर्विज्ञान पद्धति भी इस तथ्य पर ज़ोर देती है कि यदि तीन देह-द्रवों का सन्तुलन बिगड़ जाए तो हम किसी न किसी रोग के शिकार अवश्य हो जाएगें।

रोग निदान: रोग निदान के मुख्य: तीन कारण हैं :- 1- नाड़ी परीक्षण 2- मूत्र परीक्षण 3- रोगी से पूछताछ। तिब्बती चिकित्सकों ने नाड़ी परीक्षण रोग निदान का सबसे महत्वपूर्ण तरीका बताया है। क्योंकि इससे शरीर के अंगों के कार्यों की जानकारी मिलती है। लेडी डॉक्टर लोवजंग डोलमा कहते थे कि 94 प्रतिशत रोगों का निदान नाड़ी के सही परीक्षण द्वारा ही किया जा सकता है। भारत के मुकाबले तिब्बत में नाड़ी परीक्षण विज्ञान अत्यधिक विकसित था। चरक और सुश्रुत ने अपने ग्रन्थों में नाड़ी विज्ञान का कोई विशेष उल्लेख नहीं किया। मगर वाङभट ने नाड़ी विज्ञान पर थोड़ा प्रकाश अवश्य डाला है। मूत्र परीक्षण रोग निदान का दूसरा महत्वपूर्ण तरीका है। मूत्र का रंग, गंध इसमें उठने वाले बुलबुले और तलछठ इत्यादि इस त्रिदोष वात्त, पित्त, कफ जो कि जीह्वा लाल, सूखा तथा खुरदरा हो तथा किनारे में लाल दानें हो तो यह बात रोग का लक्षण होता है।

उपचार पद्धति:- भोट आरोग्य विज्ञान में कई प्रकार की दवाईयों का प्रयोग किया जाता है। तिब्बती चिकित्सा साहित्य का 90 प्रतिशत भाग विभिन्न औषधियों पर उनका उत्पति, प्रभविष्णुता, प्रयोग तथा गुणवत्ता के आधार पर वर्गीकरण से सम्बन्धित है। भोट उपचार पद्धति में जड़ी बुटियों के प्रयोग का सर्वाधिक महत्व है। चिकित्सा के विभिन्न ग्रन्थों में हजारों जड़ी बुटियों का वर्णन मिलता है। जड़ी बुटियों के सभी भागों जैसे फलों, पत्तों, तथा फूलों के दवाईयों के रुप में भरपूर प्रयोग किया जाता है। इन जड़ी बुटियों को इकट्ठा करने के लिए हिमालय की ओर जाना पड़ता है जैसे नेपाल, सिक्किम, लद्दाख, जस्कर, लाहौल, स्पिति व रोहतांग, मनाली बगैरा। रोहतांग में तो भरपूर जड़ी बुटियां हैं। जिससे दवाईयां बनती है। इनमें से बहुत सी जड़ी बुटियां है जो भारतीय आयुर्वेद द्वारा भी प्रयोग में लाई जाती है। तिब्बती औषधियों में जन्तुओं से लिए गए पदार्थ जैसे जानवरों के सींग, हड्डियां, दांत चमड़ा,मूत्र आदि इस्तेमाल किए जाते हैं। भारतीय चिकित्सा पद्धति के अनुरुप तिब्बती दवाईयों में बहुमूल्य रत्नों और खनिजों का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त दहन कर्म, रक्तमोक्षण, जल स्नान, मालिश आदि को रोग निवारण के लिए कभी -कभी प्रयोग किया जाता है। तिब्बती चिकित्सा पद्धति में मन्त्रों का भी प्रयोग किया जाता है। जैसे ओअम् वज्र पानी हूं फा, इत्यादि कहने पर कहते हैं कि मरीज़ ठीक हो जाता है। तिब्बत में ऐसा विश्वास था कि कुछ रोग भूत-प्रेतों द्वारा फैलाए जाते हैं। तिब्बती चिकित्सक नाड़ी द्वारा ही पहचान लेते हैं कि रोग की उत्पति त्रिदोष के कारण है अथवा इसके पीछे किसी पैशाचिक शक्ति का हाथ है। ऐसे रोगों के निवारण के लिए प्राय: भैषज गुरु द्वारा बुद्ध का आह्वान करके पूजा तथा बलि दी जाती है। जब हम हिमालय क्षेत्रों की संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने की बात करते हैं तो हमें इन क्षेत्रों की भाषा, कला, इतिहास, धर्म तथा रीति रिवाजों तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए।

भोट आयुर्विज्ञान एक ऐसा महत्वपूर्ण घटक है जिसे हिमालयी संस्कृति से अलग करके देखा नही जा सकता। हिमालयी क्षेत्र और आर्युविज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं। क्योंकि हिमालय का सम्पूर्ण वनस्पति जगत-आयुर्वेद को संवत प्रदान करता है। भोट चिकित्सा पद्धति ने हजारों वर्षों से इन क्षेत्रों के रूग्ण समाज की सेवा की है। और जब से परम पावन दलाई लामा जी भारत पधारे हैं तब से तिब्बती आयुर्विज्ञान का प्रचार केवल भारत में ही नहीं अपितु समस्त संसार में होने लगा हैं। तिब्बती चिकित्सा पद्धति में आज समस्त संसार रुचि ले रहा है। आज कल बहुत सी अमूल्य दवाईयां विदेश भेजी जाती है। जैसे रिन्चेन, डांगजोर, रत्ना सम्फेल, नामक 70 प्रकार के रतनों का समावेश है इस गोली के साथ 18 अन्य तत्व मिला देने से ही हृदय रोग, कैंसर, क्षय रोग, ट्यूमर अस्थमा व अन्य क्रोनिक रोगियों का इलाज होता है। एक दवाई लेने से कई प्रकार के रोगों से छुटकारा मिलता है।

आजकल लोगों में ऐलो पैथी के प्रति विमोह की भावना जागृत हो रही है। ऐसा क्यों कि ऐलोपैथिक दवाईयां के अन्धा-धुन्ध प्रयोग से इनकी विषाक्कतता हमारे शरीर में अनेक रोगों को जन्म दे रही है। एक रिपोर्ट के अनुसार एलोपैथिक दवा कम्पनियां इस समय भारत में 40,000 ब्रांड नामों से दवाएं तैयार कर रही है। अभी भारत में विटामिन-ए- की कमी से प्रति वर्ष 60 हजार बच्चे अन्धे हो जाते हैं। आयोडिन की कमी से दस करोड़ लोग गले की सूजन से पीड़ित हैं। 30 लाख कुष्ठ रोग से पीड़ित हैं। कैंसर और एड्स् जैसी भंयकर बीमारियां विकराल रुप धारण किये हुए हैं। यह ठीक है कि ऐलापैथी ने सर्जरी के क्षेत्र में महान उपलब्धियां प्राप्त की हैं और घातक बीमारियों को रोका भी है। परन्तु इन दवाईयों के कुप्रभाव भी उतने ही भंयकर हुए है। इसका कारण यह है कि आधुनिक एलोपैथिक पद्धति इस देश के रोगों की नब्ज़ नहीं पहचानती। तिब्बती आयुर्विज्ञान, भारतीय आयुर्विज्ञान की तरह रोंगों के विरुद्ध प्रति रक्षात्मक उपायों पर बल देती है। ये प्रतिरक्षात्मक उपाय न तो दुर्लभ होते हैं और न महंगे। हमें इस पद्धति को बचाने और परिवर्तित करने के लिए कुछ उपाय अवश्य करने होंगे।

बिम-शची (पहेलियां)

आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा

लोक-साहित्य की एक विधा पहेलियां भी है। ये बुद्धि-चातुर्य में जन-मानस की सुन्दर अभिव्यक्तियां हैं। रहस्य और जटिलता में से आवरण हटाकर और कथ्य को उजागर कर जन-साधारण के हृदय में क्षणिक आह्लाद और रोमाञ्च उत्पन्न करना इन का मुख्य कार्य है। वास्तव में ये बुद्धि-विलास और मनोरञ्जन के सहज एंव सरल साधन हैं।

लोक साहित्य ही नहीं प्रत्युत वैदिक-साहित्य में भी पहेलियों की प्राचीन परम्परा मौजूद है। वहां इन्हें "ब्रह्मोदय" का नाम दिया है। संस्कृत साहित्य में इन का अक्षय भण्डार है। "प्रवेलिका" और "प्रहेलिका" नाम के विशाल-क्रम में अन्तर्लापिका और वाहिर्लापिका से अनेक भेद हैं।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को ब्रह्म और जगत् के रहस्य को एक पहेली के रुप में समझाया है- जैसे :-

उर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।

छंदांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदविद्।।

अर्थात् ऊपर की ओर जड़ें और नीचे शाखायें ऐसा एक अक्षय बट वृक्ष कहा गया है। वेद इसके पत्ते हैं। इस को जो जाने उसे वेद का ज्ञाता कहा जाता है। सांसारिक वृत्तियों को यक्ष और धर्मराज युधिष्ठर ने पहेलियों में ही प्रश्नोत्तर द्वारा स्पष्ट किया है।

मनुष्य स्वभाव से अपने मन की बात को छुपा कर रखता है और जहां कहीं प्रकट नहीं करता है। सबके सामने कहने में जब अड़चन महसूस करता है तो कहने की विधि को बदल देता है और रहस्य का आवरण डाल कर ही कहता है। इस के लिए रुपक, बिम्ब, प्रतीक अर्थश्लेश और शब्दश्लेश अलंकार आदियों का सहारा लेता है।

जिस व्यक्ति को लक्ष्य कर यह गूढ़ वाक्य कहा जाता है, सुनते ही वह व्यक्ति तुरन्त सजग हो जाता है और प्रस्तुत से भिन्न वस्तु अथवा भाव के गुण, धर्म, आकार-प्रकार और रुप-रंग की समानताओं में अपनी बुद्धि को तीव्र-गति से दौड़ाता है। सही उत्तर ढूंढने का प्रयास करता है। बुझारन कहने वाला वाक्यांश में 'कहीं न कहीं संकेत, प्रतीक, बिम्ब या श्लेश अलंकार छोड़ जाता है। ताकि बूझने वाला अधिक समय तक भटक न जाए। समय का अधिक व्यवधान क्षणिक आनन्द में विघ्न बन जाता है। पर यह भी सत्य है कि बुझारन कहते ही उत्तर मिल जाए तो उस में उतनी रोचकता नहीं रहती हैं। इस लिए न अधिक समय लगे और न ही तुरन्त उत्तर मिले; बल्कि इन दोंनों के बीच के समय में रहस्य से आवरण हटानें पर ही चारुता बनी रहती है।

लाहौल की पट्टनी बोली में "बिम-शची" ही पहेली है। गोन्धला वादी के निवासी इसे "छोची" कहते हैं। "छोची" का अन्य अर्थों के अतिरिक्त समझना या बूझना भी है। हिन्दी में पहेलियां को बुझारन भी कहते हैं। इस लिए इन दोनों में अर्थ समानता है। 'बिम' सम्भवतया बिम्ब का शब्द-यात्रा के कारण बिगड़ा रुप हो सकता है। शची क्रिया-पद जोड़ कर पहेली के लिए योगरुढ़ शब्द "बिम-शची" बन गया होगा।

बिम-शची का अधिकतर प्रचलन मनोरञ्जन के लिए हुआ है। बुद्धि-वैभव का चमत्कार कम ही पहेलियों में है। संख्या मे भी विम-शची बहुत अधिक नहीं हैं। इस लेख में इन का उल्लेख करना छोड़ दिया है। क्योंकि पहले ही ज्ञात पहेलियां हैं और उसमें भी संख्या में न्यूनता है। इस लिए उनके बुझाने में वह चमत्कृत करने की क्षमता नहीं रहती है जिस की अपेक्षा होती है।

यहां मैं स्वरचित कुछ पहेलियों को देवनागरी लिपि में पाठकों के आनन्द एंव मनोरञ्जन के लिए पट्टनी बोली में उपस्थित करने का प्रयास कर रहा हूं। ये कितनी आह्लाद-जनक एंव रोमाञ्चकारी होगी, इस का दावा तो नहीं करता। प्रथम प्रयास है। कहीं परिहास न हो जाए। फिर भी अपनी चञ्चलता से रुक नहीं सकता। बोली के शब्दों को लिपिबद्ध करना सरल नहीं है। क्योंकि नागरी लिपि में वे अक्षर नहीं जो पट्टनी के शब्दों या शब्दांशों को उनकी अपनी ध्वनि दे सकें। सही ध्वनि न दे सकें तो अर्थ बोध के लिए भ्रान्ति या सन्देह पैदा हो जाता है। जबकि बिम-शची का स्पष्ट अर्थबोध भी लक्ष्य है।

उपर्युक्त बाधा का समाधान इस तरह किया जा सकता है:- पञ्चम वर्ण को छोड़कर चवर्ग के शेष सभी वर्णों के नीचे बिन्दु लगाकर जो शब्द अपनी ध्वनि के साथ उच्चरित होता है। उसकी तालिका यह है :-

(चकार) - खुजली = चिक्सी, भेजना = चरची

(छकार) - अन्दाज़ा = छोत्पा, आवश्यक = छक्चन अंग = छिक्पा

(जकार) - सहन करना = ज़क्ची, दौड़ = ज़रका।

टवर्ग के भी पञ्चम को छोड़ कर शेष वर्णों के नीचे यह ^ चिन्ह् लगा देने पर जो

ध्वनि निकलती वे शब्द हैं :-

टकार - टशी छेरिंग = ट्रछेरिंग, गूंथना = ट्रुक्ट्री काटना - ट्रिक्ट्री

ठकार - केंतीली = ठ्राऊ, लकड़ी का जग = ठ्रोकुडु इकट्ठे = ठ्रोक्कां

डकार - जीतना = ड्रक्पी/इसी प्रकार अन्य शब्दों की ध्वनियां भी समझ लेनी चाहिए।

शकार के ऊपर यह (v) चिन्ह लगाने से शब्द या वर्ण में जो ध्वनि होती है, उस को समझने के लिए निम्न शब्दों को देखें--

सेब = शैं, शर्माना = शैंपी, उबलकर पकना = शुंशीं, गर्मी का मौसम = शैंले।

ए, ऐ, ओ और औ हिन्दी भाषा में दीर्घस्वर हैं। परन्तु पट्टनी के कई शब्दों में ये स्वर ह्रस्व भी होते हैं। अनेंक शब्दों में आने वाले सभी स्वर की ध्वनि विसर्ग (:) जैसी होती है। लिपिवद्ध किया यह निर्देशन तो लाहौल वासियों के लिए सुविधाजनक है। परन्तु पट्टनी बोली न बोलने वाले बाहर के लोगों को प्रत्यक्षतः उच्चारण करके इन विशेष ध्वनियों का ज्ञान कराया जा सकता है।

'बिम-शंची'' विषय के प्रकरण में ध्वनि-विज्ञान के बारे में कहने की आवश्यकता इस लिए पड़ी है कि उक्त विषय को पट्टनी में दिखाना है। जहां ध्वनि का ठीक उच्चारण होना आवश्यक है। इस का उल्लेख पहले भी किया जा चुका है।

'बिम-शची' की कुछ शाश्वत तथा प्राकृतिक; कुछ लाहौली परिवेश, कुछ सर्वत्र विद्यमान वस्तुओं या भावों को लेकर रचना की है।

बिम-शची

(1) न तुईए अपा, न थलारिङ वङज़ा

न छपा, न नःचा, दुः अपीरङ

छपातईं, इवीरङ नःचातई।।

(2) दोऊ हड़गोतर अर्ला मसीऊरे।

तांला ङमीङ् रिङ भद्दरा श्वा।।

(3) इः फेरा गरफीरङ फुक विङमा।

ऊइः फेरा गरफीरङ् छिते श्वा।।

(4) फुक ततू छङ्से शिर-शिर सुल-सुल

एनारङ बराबर क्रा लह्मे लह्मे

एकेरिङ् लहसी ततू, एना तो व्यके

अओ तचे बङज़ोन शोःरी व्यके

यङपे कः अच्चिला मरुक्ची।।

(5) साङारक्तिङ बिन्दी लगाचा सुहागन

साङारक्तिङ रणमेचमी शुचे बङज़ा।।

(6) दोई जुट्टे आह ततू

ह्प्साटु थचेतुईं

विश्वास लाजी

सही गप्पा प्रेवा।।

(7) ग्रिल रांशा सीईं ओमड्राकू

टटू तचे तितङ खड़े जुल्ला

पुन्जङ मेःरंड्रीरङ् शिङ्मतोकू

ती तुङे, तित्त कार्चे, धले दाह्ग लेपा

(8) महाभारतो ज़वाना यःचित्

रोजे सञ्जयेऊ तुज़ी धृतराष्ट्र

धृतराष्ट्र हेनरे त कूज़ी सञ्जय

अरिशु।।

(9) फुक तेम्मा ज्वानीऊ फोला

एना छोटे दहड़ी लह्मे।।

(10) दिरे नुरे योङ तोरिङ

पी ठारिङ बढ़ि केरीरे

ङा ङा कुर्चो, पुन्ज़ा ट्रिके

न सीरीरे न शुई वाहिक्ती।।

(11) रशी छुसा इ मेचमी-कटु

वेण्डिङ् तार रण्ड्रा चुब्भी रैं

घड़िया पुन्ज़ा तङ्फा घड़िया कोन्ज़ा।।

(12) याः तोई धरती वाः तोई एके

बिचङ् तरेकू दोऊंणे अञ्जी योः

ध्याड़ा श्याज़ी योङजी बाज़ी तोरिङज़ी

शुई बाहिके बाहिके ज़रीकू

दुनियांजी मतङरे स्वंगलों दोची तङरे।।

(13) न रावण शुगा, लन, ती, में, गे गाबूरिङ तत्तग

न जप तप लगा न जादू टोणा, कूजी परसल चिःशु।।

(14) आह-ए-म्यकुटु ठ्रोक्कन ले

कम लाज़ा, रङ कोन्ज़ा मतु।।

(15) फुक किनिरी, आह बेल्ले-ए- मोड़े

रोजे रक्साला पूरा दङ्

अचर्जा तिर्ज़ा इल्जा खोग-वङ्।।

(16) मुत्तिग् विडी थाड़ फुचङ

रोजे पुन्ज़ो टोकठे किर्ज़ा

धोड़ँ-ब्रेस इलि एच्चला मुत्तिग्

दपी मतङरिगा।।

(17) ञ्वाञे तेप्चीए सग् लेप्चा
केचे केवे सीए ग्वा
घड़ी शिङमा घड़ी सीवा।।

(18) ङा मीतु विचङ इचा मेचमी
तांला तकड़ा छप्कन्दा जोआ
जुटरङ् साते झेग् झेग्सा
इचारङ् खड़े धरिक्सी मर्चा।।

(19) पीकोन्ज़रङ जोआ पिकोन्ज़ा मशु
मी तङमे हऊशिक्पा खुई मशु
रातरी टीरा अल्ज़ा भुलु मशु।।

(20) एना हड़खड्खर फुचङ शुचे
लेहज़ी इचो खोग् ट्रवाल्ड्रा
उई भत्तेतु खोग टुन्ड्रा।।

(21) रोकी चादर पुन्ज़ङ लहज़ा
मुतिक्तू बेजा एची इलि
तीङू फसल पुङे इलि
कुडु दि खन्ड्रोमा शुदा?।।

(22) तुई मेंः फर्जी, थले टुः
ज़वाना वदिलीका
तुई टुः थले मेंः फर्जा।।

कृपया सभी बिम-शची के उत्तर अगले किसी भी पृष्ठ पर ढूँढ लीजिए।

गुरु घंटाल गोम्पा

छिमे अंगमो साहनी

संगम,जहां चन्द्र और भागा का मिलन स्थान है, से कुछ उंचाई पर एक गोम्पा है जो कि चन्द्र और भागा के बीच स्थित ड्रिल्बू पहाड़ी पर है, 'गुरु घंटाल' के नाम से जाना जाता है। यह गोम्पा लाहौल के प्राचीनतम गोम्पाओं में एक है जहां एक लामा रहता है और वही पट्टन घाटी के कुछ भागों के धर्म सम्बन्धी रीतियों व क्रिया कर्म का उत्तरदायित्व निभाता है।

इस गोम्पे की स्थापना आंठवी शताब्दी में पदमा सम्भव जो उरज्ञान रिम्वोचे के नाम से भी जाने जाते है के द्वारा की गई थी। उरज्ञान रिम्वोचे इस क्षेत्र में बुद्व धर्म के प्रचार के लिये आये थे। इस गोम्पे में मुख्य प्रतिमा संगमरमर की बनी हुई मात्र सिर है। ऐसा कहा जाता है कि प्रतिमा उसी कलाकार द्वारा निर्मित है जिसने त्रिलोकनाथ स्थित प्रतिमा का निर्माण किया था। पुरानी कहानियों के अनुसार इस प्रतिमा का सिर संगम के तट के रेतीले भाग से उभरना शुरु हो रहा था। किसी ने इस चमत्कार को देखा और पूरा शरीर उभरने से पहले उसने अपनी तलवार से सिर को अलग कर दिया। बाद में इस गोम्पे की स्थापना हुई और सिर को मुख्य देवता के रुप में इस गोम्पे में स्थापित किया गया और बहुत सारी प्रतिमाएं बाद में इस गोम्पे में रखे गये। इन प्रतिमाओं की स्थापना लामा रिनचेन जंगपो द्वारा की गई थी।

ट्रशी थमवेल एक जाने माने लामा थे जिन्हें एक बार गुरु घंटाल गोम्पे में भेजा गया था। जिन के बारे में लाहौल में एक लोकगीत काफी लोकप्रिय है। उनकी मृत्यु के बाद पुनर्जन्म में उन्हें दुबारा गुरु घंटाल गोम्पे में भेजा गया। ऐसा कहा जाता है कि उन्होनें 'रुबु पोहाल' जो कि वहां पर भेड़ें चराया करता था और हागू तरखान को पहचान लिया था जो ट्रशी थमवेल के पिछले जन्म में जब लामा ट्रशी थमवेल गोम्पे का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, उस समय गोम्पे के निर्माण में लगे हुए थे। यह लामा आजकल लद्दाख के टांगना गोम्पे में रहते हैं और अभी भी गुरु घंटाल गोम्पे में आते रहते हैं।

गुरु घंटाल गोम्पे में एक दैत्य की प्रतिमा भी है जिसका नाम छेदक है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि एक बार यह दैत्य पागल हो गया था और लोगों का काफी नुकसान भी किया। अन्त में एक ज्ञानी लामा ने इस दैत्य को काबू में किया। और इस दैत्य की प्रतिमा को गोम्पे के तहखाने में अन्धेरे कमरे में बन्द कर दिया और लोगों को कहा कि इसके पश्चात् इस प्रतिमा को कभी रोशनी नही दिखाना। शायद यह लामा वही ट्रशी तम्बेल ही हो। उस समय उन्होनें सारी प्रतिमाओं को दूसरे गोम्पे में रखा यह गोम्पा तूपचिलिंग के नाम से प्रसिद्व है। ड्रिल्बू पहाडी के नीचे और मुख्य सड़क के साथ स्थित इस गोम्पे तक पर्यटक आसानी से पहुंच सकते हैं, अब तो गोम्पे के साथ ही गाड़ियों के जाने के लिये भी सड़कें बनाई जा रही हैं। वास्तव में यह ड्रिल्बू पहाडी गुरु घंटाल और तूपचिलिंग गोम्पा तथा संगम स्थल पर्यटकों के लिये आर्कषण का केन्द्र है।

लाहौल का क्या होगा?

-सरला

कहीं एक जमाब है, एक झुण्ड है लाहौल की नारियों का। हाथ में बुनाई का काम और बाते सेब से लेकर टूरिस्ट तक और लाहौल के मटर, आलू और हॉप्स से ले कर उन बहादूरों (गोरखों) तक जिन की आज लाहुली समाज में महत्ता बहुत बढ़ गई है। फंला के घर में कौन हैं? लड़के तो सभी अच्छी नौकरियों पर लगे हैं व बिजिनेस कर रहे हैं। बहुएँ भी साथ हैं। शहरों में रह कर ही बच्चों का भविष्य बनेगा, लाहौल में क्या खाक भविष्य बनेगा? कौन होंगे? बूढ़ा-बूढ़ी और एक दो भादर नौकर है। सारा काम वही सम्भालते हैं। गाय दुहने से लेकर तिवाड़-मोबाड़ (सिंचाई) और सर्दियों में ऊन कातने तक। अगर ये बहादुर न हो तो न जाने लाहौल का क्या होगा?

ऐसी बातें पिछले कुछ सालों से आम सुनने को आती हैं। चाहे लाहौल में किसी गली या नुक्कड़ में हो चाहे खेत के किनारे हो व कुल्लू मनाली में किसी के अहाते सड़क के किनारे।

लाहौल प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है। पिछले कुछ दशकों में यहां प्रगति की रफतार सुपर फास्ट की रफतार से बढ़ कर है। मेहनतकश और हर किसी अच्छे नएपन को अपनाने की प्रवृति और खूबी की वजह से आज हम लाहौल वासी बाकी समाज में स्वंय को किसी हद तक स्थापित कर चुके हैं। (याद रहे यह महज आरक्षण की वजह से नहीं हैं) आज के समाज में आधुनिक युग में प्रवेश पा रहे हैं। बुरा कुछ नहीं पर कुछ-२ अच्छा भी नहीं हो रहा है। क्या करें प्रकृति का नियम है कुछ पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ता है। नई पीढ़ी तो नएपन के मद में चूर हैं। जो अच्छा नहीं हो रहा है उस की चिन्ता अगर किसी को है तो वह उस बुद्धिजीवी वर्ग को है जो हर बात को तराजू में तोलकर ही उस का मूल्यांकन करती है और बहुत बाद की भी सोचती है जहां से हम चाहें भी तो मुड़ कर नहीं आ सकते दूसरे उस बुर्जुआ वर्ग को है जिस ने उस माटी के लिए अपना खून पसीना एक किया है और हाथ-पैर तोड़े हैं, उस मिट्टी से सोना उपजाने के लिए। खुद मैने उन्हें उस माटी में इस कद्र घुल-मिल जाते देखा है कि कभी-कभी तो मिट्टी के ढेले और आदमी के सिर में कोई अन्तर मालूम न पड़ता था। आज वे अगर बनाई कृति को ढहते देखें तो निश्चय ही उनके कलेजे छलनी होंगे। आज अगर आधुनिकता की दौड़ में एक-एक सदस्य उस नाते से मुंह मोड़ना चाहे तो घर के सूने आंगन और नौकरों की बढ़ती तानाशाही से हमारा बुजुर्ग वर्ग अवश्य ही कुंठित व पीड़ित होगा।

लाहौल उन्नति के मार्ग पर अग्रसर है तो उसी माटी की बदौलत। कृषि के नए तरीके, आय के अच्छे साधन, किसी हद तक आराम का जीवन (पहले से) पर कभी-२ कुछ दशक पहले की यहां की पवित्र सामाजिक, मोहक संस्कृतियों और प्रेम तथा सहयोग की भावना का अभाव खटकने लगता है। पुरानी सांस्कृतिक धरोहरों का चटाख से तिरस्कार व सहयोग तथा बन्धुत्व की भावना का अभाव दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है। समय-अभाव व व्यस्तता इस कद्र बढ़ गई है कि उत्सव व मेले तथा त्यौहार कहीं औपचारिकता वश व कहीं तो बिलकुल ही नहीं मनाते। जीवन का वह रसीला पक्ष शायद हम धीरे-२ खोते चले जा रहे हैं। टी०वी० व केवल टी०वी० का आगमन क्या हुआ कि खोगल और कूं जैसे पवित्र त्यौहार भी भूलने की नौबत आ गई है, वे अब अपना रस खोते चले जा रहे हैं। बच्चों को पब्लिक स्कूलों में डाला जा रहा है और हम अपने घरों में न तो अपने ही त्यौहार ठीक ढंग से मना पाते हैं और न अंग्रजों के त्यौहार मना सकते हैं। ऐसे में बेचारे बच्चे संस्कृति विहीन हो अधर में लटक कर रह गए हैं।

जिस अगाध श्रद्धा से पहले हम त्यौहार मनाते थे। अब वह वैसा नहीं होता। कितनी गम्भीरता से लेते थे हर रस्म को हमारे बुजर्ग लोग और उस गम्भीरता के प्रति हमारी कितनी श्रद्धा होती थी। जहां गम्भीरता ही न हो वहां श्रद्धा कैसी? यही कारण है आज हमारी इन सभी रस्मों रिवाज़ों के प्रति सम्मान कम होता जा रहा है।

दूसरी बात, सहयोग व बन्धुत्व की भावना का धीरे-धीरे लोप होना। दूसरे अर्थों में वैयक्तिकता की तानाशाही। घर में हो चाहे गांव में सहकारिता खत्म हो रही है। परिवार की छोड़ों पहले गांव में ही कितना सहयोग का वातावरण रहता था। घर में घर के सदस्यों में त्याग व अपनत्व की भावना किस कद्र अच्छी लगती थी। परिवार का हर सुख-दुःख हर सदस्य की खुशी व गम सब का होता था। 'मैं' का त्याग, अहम् का त्याग। यह एक बहुत बड़ा गुण था हमारे लाहुली समाज का। परिवार का जो कुछ होता है वह सब का होता है। हम-हमारा, में 'मैं' की कोई जगह ही नहीं थी हमारे समाज में। हम यह दो अक्षरों का छोटा सा शब्द कितना अर्थपूर्ण है, कितना सन्युक्त होने का आभास दिलाता है यह शब्द। यहां मैं का परित्याग हो जाता है और अहम का विस्तार। हिन्दुत्व का मूल मन्त्र है- 'वासुदेव कुटुम्वकम!' एक समाज ही क्या पूरे विश्व में प्रेम का संचार तभी हो सकता है जब हम इस 'मैं' को विस्तार दें और अहम को त्याग दें तभी यह विश्व रहने लायक बन

सकता है। फिर परिवार तो समाज की सबसे छोटी व आरम्भिक इकाई है। क्या आज हम लाहौल वासी भी इस 'मैं' शब्द के इर्द-गिर्द सिकुड़ते व सिमटते नहीं जा रहें हैं?

अलगाववाद, पृथकतावाद और वैयक्तिकता। ये तीन घुन आज विश्व को चाट रहीं हैं तो हम लाहौलवासी कैसे इससे बच कर रह सकते हैं। शायद यह इस युग की मानसिकता ही है। इस सच्चाई से, हम कोशिश करे भी तो दूर नहीं भाग सकते। कब तक और कहां तक उस मानसिकता पर पर्दा डाल कर स्वयं को, आत्मन को झुठलाने का प्रयास करता रहेगा। ऐसे में वह सहयोग व बन्धुत्व की भावना आएगी कहां से?

वास्तव में, हमें युग की मानसिकता को समझना चाहिए और उस को समझते हुए एक एड्ज़स्टमैंट करना चाहिए। संयुक्त परिवार के विघटन पर रोना नहीं चाहिए, हां बन्धुत्व की भावना के ह्रास पर आंसू बहाना चाहिए और हल ढूंढना चाहिए। जहां समझ होती है वहां समस्या आती ही नहीं। हां जैसे पहले भी उल्लेख हुआ है-अहम् के विस्तार के लिए सदैव प्रयत्नशील रहें वास्तव में यह एक ऐसी ईश्वरीय अनुभूति है कि दूसरा आनन्द हम कहीं भी, किसी भी वस्तु में नहीं पा सकते। क्या हम इस तरह का अपने बीच एक समझौता नहीं कर सकते?

बुर्जुगों की चिन्ता कि अपनी माटी का क्या होगा? सो हॉप्स और मटर ने युवा वर्ग को अपनी जन्मभूमि की और काफी आकर्षित किया है और काफी लालायित भी नज़र आ रहे हैं यह एक बहुत ही अच्छी बात है कि हम अपने बाप-दादों और मां-बहनों की कर्मभूमि को संभालेंगे और इसे संजो कर रखेगें तो निश्चय ही हम लाहौल वासी वास्तविक अर्थों में उन्नत कहलाऐंगे। और लाहौल एक दिन पूरे देश के लिए ही नहीं पूरे विश्व के लिए एक आदर्श बनेगा।

अपेल गे बाड़े तोइग

-घरसंगी

अपेल गे बाड़े तोइग
दु सम्मा रुठे तोई
अपो टुड़िंग मेमे-ऊ बू
बबा बया-तू शरसी
कका छ़मो-चे़ दा लज़ी
चिठ्रो रूठे ध्याड़ा तोई
दु सम्मा रुठे तोई।
ध्याड़ा सूले ग्वाते
मीचे़ चसा गप्पा ल्वातेर
अने अपू-चे़ योंश्र अपे
चुचुरिंग र्‌ही-रिङ श्वातेर
याज़े छचिरिङ ला दा लज़ी तोई
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।
त्रुई तचे मोड़े शुबि रन्ड्री
धले कतापे तखती कन्ड्री
धों तचे र्‌ही दङ, बुट.रे
सवरिङ ह्योज़ी प्योऊ बङ खन्ड्री
र्‌हेचा ला मज: अपि तोई
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।
शेगचूमु मोक्का रोऊड़ शुबी
पितङ्ज़े-२ पानु-ए-खण्ण पेट्रि
चूङु नुदु-ए-म्हर बे चे़
कचे हलवा-ए-अङू ओड़ोङ्ग रूठे अपि
छटि रांश्री-ऊ बास रूठे चेसि तोई
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।
थङज़द वल्ज़ी, ञरचा र्‌हुन्ड्री
मीतु बागअंङ चीर-ए-श्रे कूज़ी
श्रङ वल्ज़ातिङ शोद् शिल्ज़ी
बोति रङ मुग्सू छुये ज़ेई
कुर ल्ही शुचे ला सेम् सङङा तोई
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।
आश्रो थल्ज़े भत्ते-तुङ क्युरपि इबि
मधु-ऊ बङड्रा प्यरा तना हिरी रे
फुचो सुन अपेल ह्योसदआ खन्ड्री
दीतु ह्योसोतो दोतुङ इबि
भत्ते-तु च़न्ज़ा तेम्मा पुग शुबी तोई
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।
गुन खोगल: कूंहन्जू र्‌हूम्ज़ी
खरकोई कोट, टोबुडु तेम्मा झोलुणू
रिड़ि पणा ल्हेयी कुरच़: तिङ पानु रन्ड्री
कुरच़रे क्रीट्रि मरपे मेमेऊ घुड़कि रेड्री
रेल्मो अपिरङ मुदरसङ् च़रचि़ तोई
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।
अपेल गे बाड़े तोइग
दु सम्मा चिठ्रो रुठे तोई।

लाहौल-स्पिति की भौगोलिक स्थिति अभिशाप है या वरदान

विनीता ठाकुर

प्रकृति की महिमा कितनी अपरम्पार एवं अद्‌भूत है। प्राकृतिक रचना और स्थिति की कोई सीमा नहीं कोई ओर-छोर नहीं। कहीं गगनचुम्बी पर्वतमालायें, तो कहीं सीमा रहित सुदूर तक फैले मैदान ही मैदान। कहीं तपती गर्मी का प्रकोप है तो कहीं बर्फानी तूफान कांप रहा है। कहीं कल-कल करते नदी नालों का अम्बार है,तो कहीं पशु पक्षी प्यास से तड़प-तड़पकर दम तोड देते हैं। संक्षेप में प्रकृति की रचना लीला जितनी अपरम्पार है, उतनी ही अनुपम है,सुन्दर है एवं श्रेंष्ठ है।

इसी प्रकृति की अद्‌भूत, अनुपम एवं सुन्दर ब्यूह-रचना का निर्माण एवं विकास हिमालय की गोद में बसा जिला लाहौल-स्पिति में भी हुआ है। समुद्र तल से लगभग 13 हजार फुट की उंचाई पर स्थित रोहतांग दर्रा पार करने के पश्चात् प्रकृति की एक नई, अदभुत एवं सुरम्य ब्यूह-रचना का जीता-जागता सबूत देखने को सहज ही सुलभ होता है। आकाश से बातें करती पीर-पांचाल की पहाड़ियां, बर्फ से ढकी इन पहाड़ियों की सफेद चोटियां वर्ष में छः महीने बर्फ से ढकी यहां की धरती एवं नदी नालों की कल-कल की आवाज से गुंजित यह जिला अपनी अनुपम भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से न केवल पूरे प्रदेश में अपितु सारे देश में ही विशिष्ट स्थान रखता है।

प्रकृति की इस अनुपम भौगोलिक रचना का यहां के निवासियों पर क्या प्रभाव पड़ता है। अर्थात उपरोक्त भौगोलिक रचना अभिशाप है या वरदान,मुख्य प्रश्न यही है। जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि लाहौल स्पिति पहाड़ी इलाका है और अनेकानेक प्राकृतिक प्रकोपों से ग्रस्त है, पूरे देश में यही भू-भाग है जिसका शीत ऋतु में छः महीने की दीर्घ अवधि के लिये देश के अन्य भागों से सम्पर्क पूरी तरह से कटा रहता है। विगत कुछ वर्षो से हैलिकाप्टर सेवा द्वारा डाक और जरुरतमन्द लोगों के आने-जाने में कुछ सुविधा अवश्य पहुंची है। सन् 1979 में भारी हिमपात ने पूरी लाहौलघाटी में जान-माल को जो अपार नुकसान पहुंचाया, यह भौगोलिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में अभिशाप से कुछ कमतर नहीं थी। भारी हिमपात के कारण जिले में वर्ष में केवल एक ही फसल ली जाती है।

यहां की भौगोलिक स्थिति ही ऐसी है कि कठोर मेहनत के बलबूते पर ही अनाज,फल सब्जियां इत्यादि प्राप्त की जाती हैं। तपती दोपहर हो या कड़ाके की प्रातः यहां के निवासियों को हमेशा इस कठिन भौगोलिक रचना से जूझते रहना पड़ता है। मानो कि घाटी की जनता अपने माथे पर सतत् परिश्रम एवं प्राकृतिक परिस्थितियों से जूझते रहने की शब्दावली लिखा लाये हों। पीढ़ियां बदल जायेंगी,परन्तु इनका संघर्ष इन की मेहनत कभी खत्म न होगी।

दूसरी ओर यहां की भौगोलिक स्थिति पर गहरी नजर डालें तो इसके दो पहलू दिखते हैं अच्छा एवं बुरा। जहां तक बर्फ से पीड़ित होने का प्रश्न है, यह सही है कि बर्फ घाटी निवासीयों के लिये बेहद कष्टप्रद है। परन्तु दूसरी तरफ बर्फ उतना ही हितकर भी है। यदि सर्दियों में बर्फ न पड़ती तो गर्मियों में पानी की कमी हो जाती है। जबकि लाहौल की सम्पूर्ण खेती-बाड़ी वर्षा पर न निर्भर होकर सिंचाई पर निर्भर है। अतः बर्फ की फाहें प्राकृतिक विपदा की द्योतक नहीं, अपितु घाटी वासियों के लिये मोती के दानों के समान हैं। यदि सर्द ऋतु में बर्फ पड़ेगी, तभी गर्मियों में पानी की कमी नहीं रहेगी। फलस्वरुप खेत एवं चरागाह हरियाली से लहलहा उठेगी, कर्मठ किसान को उसकी मेहनत का समुचित फल मिलेगा। अतः घाटी में खुशहाली एवं समृद्वि की परम्परा पूर्वतः कायम रहेगी। खेत छोटे बेशक हैं परन्तु यहां की भूमि उर्वरा है। गेंहू की फसल प्रति एकड़ पंजाब जितनी होने लगी है। सिंचाई का समुचित प्रबन्ध होने की वजह से दुर्भिक्ष का सामना कम ही करना पड़ता है। जीवन यापन की मूलभूत आवश्यकतायें यहीं पैदा हो जाती हैं । मेहनत की बदौलत कोई भूखा नहीं सोता, कोई नंगा नहीं रहता।

अन्ततः इतना ही कह सकती हूं कि बेशक यहां की जनता को भौगोलिक स्थिति के कारण अनेकानेक अडचने एवं मुसीबतों का सामना करना पडता है। परन्तु जब तक "श्रम-मेव-जयते" का मंत्र इन लोगों के दिलो-दिमाग में विद्यमान है, घाटी निवासी हर प्रकार की मुसीबतों का सामना करते हुए आगे बढते रहेगें। क्योंकि इतिहास इस बात की साक्षी है कि अध्यवसायी और आत्मबल का धनी कभी निरुत्साहित नहीं होता, सफलता उनके कदमों को अवश्य चूमती है। अतः यहां की भौगोलिक स्थिति अभिशाप नहीं,अपितु वरदान है।

"महापंडित राहुल सांस्कृत्यायन और हिमालयन बुद्धिस्ट एशोसियेशन मनाली का सम्बन्ध"

-शिव चन्द ठाकुर

पेश्तर इसके मैं अपने असली प्रस्ताव की तरफ ध्यान दिलाऊं, मैं बुद्ध मज़हब पर कुछ रोशनी डालूं।

भगवान बुद्ध का जन्म इस संसार में उस समय हुआ जब भारतवर्ष में छुआछूत का ज़ोर था, बलि इत्यादि कर्मकाण्डों का ज़ोर था। ब्राह्मणों को समाज में उच्च स्थान प्राप्त था। शुरु में बौद्ध धर्म कोई खास असर वाला नहीं था। यह महज़ एक पुराने ख्यालों की संस्था थी। लेकिन भगवान बुद्ध ने अपने शिक्षा व उपदेशों के बल पर इस धर्म को विस्तृत किया। भगवान बुद्ध के अनुसार संसार दु:खों का घर है। इन दु:खों का मुख्य कारण इच्छाएं हैं। इन इच्छाओं का दमन करने से ही सुख की प्राप्ति हो सकती है। उन्होने सुख प्राप्त करने के लिए अष्टमार्ग पर चलने की प्रेरणा भी दी। जिसे आज संसार में 'धम्मपद' के नाम से जाना जाता है। 'धम्मपद' बुद्ध की अपनी वाणी है। बुद्ध ने कठोर अहिंसावादी मार्ग को त्यागकर मध्यमार्ग अपनाया ताकि हर वर्ग के लोग इसे गृहस्थी में रहकर भी आत्मसात कर सकें। यही मुख्य कारण है कि बुद्धधर्म को विश्व में जनता ने आसानी से अपना लिया। बौद्ध धर्म ने बलि प्रथा तथा छुआछूत या ऊंच-नीच को समाप्त करने के लिए सुधारवाद आन्दोलन चलाया। बुद्ध ने कहा था संसार में सब से महापाप अज्ञानता है, इसी अज्ञानता के कारण ही मनुष्य दूसरे लोगों और पशु-पक्षियों को दु:ख पहुंचाते हैं। और दु:ख गुनाहों से पैदा होते हैं । इस दु:ख से बचने का एक ही रास्ता है यानि मोक्ष यानि निर्वाण।

राहुल सांकृत्यायन जी तिब्बत और लद्दाख से होते हुए लाहौल पहुंचे और गैमूर और खंगसर में कुछ समय ठाकुरों के यहां ठहरे जहां उन्होंने बुद्ध धर्म की शिक्षाएं आदान-प्रदान की। उसके पश्चात् केलंग में डॉ० भगवान सिंह के यहां ठहरे। डॉ० भगवान सिंह उन दिनों कट्टर आर्यसमाजी थे, राहुल के सम्पर्क में आने पर डॉ० भगवान सिंह ने बौद्ध मत को स्वीकार किया। उन दिनों लाहौल स्पिति, लद्दाख, जंखसर, रुपशों (जहां बौद्ध धर्म के अनुयायी काफी संख्या में हैं) आर्थिक तौर पर पिछड़े ये लोग सर्दियों में मैदानी इलाके में रोजी-रोटी कमाने आते थे। कुल्लू की तरफ इन लोगों के ठहरने या पूजा-पाठ करने का कोई साधन नहीं था। चुनाचें राहुल जी डॉ० बोध, ठाकुर मंगलचन्द और उन दिनों के पढ़े-लिखे लोगों के दिमाग में राहुल जी के सम्पर्क में आने पर विचार पैदा हुआ। सन् 1940 में इन लोगों ने एक संस्था "हिमालयन बुद्धिस्ट सोसाईटी" खोलने का निर्णय लिया। जिसमें राहुल जी को मुखिया और ठाकुर मंगलचन्द को अध्यक्ष, श्रीमति लाज बोध को सेक्रेटरी और मुझे जनरल सेक्रेटरी बनाया गया। इस संस्था के लिए पहले कुल्लू (खराड़) में जगह लेने का विचार किया गया। लेकिन इसमें कामयाबी नहीं मिली। 1951-52 में "इन्टरनेशनल बुद्धिस्टि सम्मेलन" भोपाल में सांची के मुकाम पर निश्चित हुआ। इस अवसर पर बुद्ध के खास शिष्य सारी पुत्र महामुगलाना के पवित्र अस्थियों को भारत आज़ाद होने पर इंग्लैड के अजायवघर से लाया गया। और हिमालयन बुद्धिस्ट सोसाईटी की तरफ से इन अंतर्राष्ट्रीय बुद्धिस्टसम्मेलन में जाने का मुझे सौभाग्य मिला। इस सम्मेलन में तमाम बुद्धिस्ट देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। हमारे प्रधानमंत्री पं० नेहरु जी तथा वर्मा के प्रधानमंत्री यूनू और महाबुद्धिस्ट सोसाईटी के अध्यक्ष डॉ० शामू प्रसाद मुखर्जी सिक्किम और भूटान के महाराजा एंव अन्य बड़े-२ विद्वानों ने इसमें भाग लिया। मेरा सम्पर्क राहुल जी से 1947-48 में हुआ। लद्दाख से लोग पाकिस्तानी कबायली लुटेरों के डर से भागे जा रहे थे। इसलिए शरणार्थी शिविर खोले गये जिसमें राहुल जी, डॉ० बोध, ठाकुर मंगल चन्द और हम लाहौल के नवयुवकों ने भाग लिया।

महापण्डित राहुल जी का जन्म 9 अप्रैल, 1890 में हुआ। उनका नाम संस्करण के तहत केदारनाथ पांडेय रखा गया। उनके पिता गोवर्धन पांण्डेय एक गरीब किसान थे। जब राहुल 9 साल के थे तो उनका विवाह कर दिया गया। राहुल जी के मन में बचपन से ही दुनियां भर की सैर करने की धुन समाई और ज्यादा से ज्यादा ज्ञान प्राप्त करने के लिए घर से निकल पड़े। कई स्थानों का भ्रमण करने के बाद 16 वर्ष की उम्र में वह फिर घर लौटे। मगर घर में उनका मन नहीं लगा, वह फिर से भाग निकले। उन्होने डिग्रियां हासिल करके नौकरी और दुनियादारी के ख्याल हमेशा के लिए छोड़ दिये। उनके मन और आत्मा पर विराग और जीवन जगत के प्रति निर्मोह पूरी तरह छा गया था। उनकी पहली तमन्ना थी, संस्कृत में वेदान्त के अनुवाद करने की।

राहुल जी आर्य समाजी भी बने मगर उनके दृष्टिकोण के अनुसार आर्यसमाज भी उन्हें सिद्धान्तवाद और बन्द गली की तरह लगा। राहुल जी घुमक्कड़ तो थे ही इसलिए

उन्होंने रूस, फ्रांस, मंनचूरिया, तिब्बत, हिन्दूस्तान के रियासतों का भ्रमण किया। उन्हें तत्कालीन विदेशी सरकार ने तिब्बत जाने की अनुमति तक न दी। लेकिन अगर वह हार मानते हो तो राहुल कैसे बनते। वेश बदल कर ज्ञान की तलाश में राहुल जी निकल पड़े। राहुल जी के जीवन का सबसे दिलचस्प खतरनाक एंव साहसपूर्ण हिस्सा उनकी चार तिब्बत यात्राएं थीं। ट्रांस्की की किताब बालच्यूडसम और विश्व क्रान्ति के बारे जान कर वह धीरे-धीरे साम्यवादी विचारधारा की तरफ मुड़ रहे थे। वह पूर्ण तौर पर धर्म निरपेक्ष बन गए थे। और नास्तिक भी। गया कांग्रेस में राहुल ने राष्ट्रीय नेताओं से अपील की कि बौद्ध गया का हिन्दू मन्दिर बौद्धों को दिया जाए। 1923 के मार्च-अप्रैल में राहुल जी ने डेढ़ महीने नेपाल में गुज़ारे। नेपाल में वह कई बौद्ध विद्वानों व भिक्षुओं मंगोल और चीनी लामाओं से मिले। राहुल जी कश्मीर गए और जोज़ीला जोत पार कर कारगिल से लेह लद्दाख पहुंचे। लद्दाख में हिमिस गोम्पा के हैड लामा कुशोग तख्संगरिपा से उनकी भेंट हुई। लद्दाख के खलसी गांव में कुछ मोहिनी विद्या सीखी। वह लद्दाख के खारदोंग ला जो लद्दाख को नुबरा वैली से मिलाता है, और 18000 फुट की ऊंचाई पर स्थित है। राहुल रिजोंग गोम्पा के रिम्बोछे से मिले और बौद्ध धर्म पर वार्तालाप किया फिर वह छूमूर्ति होते हुए किन्नौर से शिमला पहुंचे। पश्चिमी तिब्बत की इस पहली झलकने उनके दिल व दिमाग पर गहरा छाप डाला। इस तरह उन्होंने बुद्ध धर्म के नियमों पर विचार करना शुरु किया। 16 मई, 1927 से 1 दिसम्बर, 1928 तक 19 महीनें लंका में बौद्ध ग्रन्थ पढ़ते रहे। शुरु में उन्होंने ब्राह्मण संस्कारों के ईश्वर विश्वास का बौद्ध मत से सम्बन्ध करने का यत्न किया, परन्तु यह सह अस्तित्व ज्यादा समय तक न हो सका। राहुल जी चार बार तिब्बत गए। 1925, 1934, 1936, 1938 में जब मुख्तियार खिलजी सम्राट ने नालन्दा युनिवर्सिटी व विक्रमशिला पर जबरदस्त हमला किया तो यहां के बौद्ध भिक्षु लोग बौद्ध धर्म के पाण्डु लिपियों को लेकर अपनी जान बचाकर नेपाल होते हुए तिब्बत भाग गये। उन्होंने भारतीय मूर्ति विज्ञान जो मूर्तियों और चित्रों में बचा था को ताल पत्र के सचित्र पवित्र ग्रन्थों को लकड़ी के तख्तों पर लपेट कर तिब्बत तक पहुंचाया। यह कला रेशमी थंका के नए माध्यम पर हस्तांतरित की गई। जो "तिब्बत में ईसा के सातवीं सदी में पहुंचे। तिब्बती सम्राट रांगक्सेग सपों के राज दरबार में इसका जिक्र है। नवें और तेरहवीं सदीं तक इस काल खण्ड में हजारों संस्कृत और पाली ग्रंथ भोट भाषा में अनुवाद किया गया। इन ग्रन्थों के ज्ञान से सिर्फ बौद्ध धर्म और दर्शन पर नया प्रकाश पड़ता है। बल्कि वैदिक और जैन परम्पराओं का परिचय भी मिलता है। जो ग्रन्थ खिलजी सम्राट के हमलों की वजह से खो गये थे। वह तिब्बती लामाओं के मठों में हिफाज़त से रखे हैं। अकेले कंग्यूर, तन्यूगर में ऐसे 10 हजार भारतीय ग्रन्थ सुरक्षित हैं। राहुल जी ने तिब्बत की इन चार यात्राओं में ऐसे कीमती चित्रों व ग्रन्थों को भारत लाने में बड़ी मद्द की है। राहुल जी ने पहली बार संस्कृत में तिब्बती भाषा का व्याकरण और प्राथमिक भाषा पाठ लिखा। उन्होंने धर्म कीर्ति यानि सुबन्ध और असंघ जैसे प्राचीन ग्रन्थों की हिफाज़त के लिए सबसे बड़ा काम किया है। एक बौद्ध विद्वान के नाते राहुल जी को रूस में बुलाया गया। लेनिनग्राद में वे प्रोफेसर बने। जुलाई 1929 में राहुल जी ल्हासा पहुंचे जहां उनकी जान पहचान वाले धर्मसारा के घर पहुंचे। उन्होंने 151 छन्द संस्कृत में रचे, जिनका भोट भाषा में अनुवाद किया। उसे खूबसूरत शब्दों में लिखकर दलाईलामा के एक विश्वासपात्र चेले के हाथ भेजा। दलाईलामा पढ़कर बहुत खुश हुए और आश्वासन दिया कि किसी दिन लेखक को बुलाएगें। राहुल जी ने 16 हजार भोट शब्द एकत्रित किए और उनका नेपाली और संस्कृत में अनुवाद किया। राहुल जी ने पहले तिब्बत में तीन साल रहने का निर्णय किया, लेकिन आर्थिक मुश्किलात सामने आ रही थी। काशी विद्यापीठ के आचार्य नरेन्द्रदेव जी ने 50 रुपये माहवार भेजने का बन्दोंवस्त किया। साथ ही श्री लंका से भी 3000 नायाब किताबें और थंका खरीदने के लिए पैसे भेजने का बन्दोवस्त किया। राहुल जी ने ल्हासा तिब्बत से प्राचीन महाविहार को देखने गए। जहां नालन्दा के भिक्षु शान्ति रक्षित का शरीर हिफाजत से रखा गया था। वहां राहुल जी को एक भी संस्कृत ग्रन्थ नहीं मिला, फिर तिब्बत से कुछ ग्रन्थ और चित्र खरीदे जिसे वे 18 खच्चरों पर लाद कर लाए। कंग्युर और तंग्यूर के इलावा अपने साथ 1619 तिब्बती भाषा की पाण्डुलिपि साथ लाए। वह अपने साथ धर्म दर्शन, इतिहास, ज्योतिष, चिकित्सा, भूगोल इत्यादि विषयों पर कई नायाब तिब्बती पोथियां लाएं। दार्शनिक ग्रन्थ विशेषकर नागार्जुन की आध्यात्मिक शाखा और असंग की योग शाखा के बारे में है। सातवीं से दसवीं सदी तक के क्रिया तन्त्र तिब्बती ग्रन्थ भी इस संग्रह में है। बौद्ध महायानी, बज्रयानी, सम्बन्धी 130 चित्रपट भी राहुल जी अपने साथ लाए। उन्होंने तिब्बती हिन्दी कोष भी संकलित किया।

17 नवम्बर, 1937 से 13 जनवरी, 1938 तक राहुल रूस में रहे। जहां उनकी भेंट भारतीय-तिब्बती विभाग की सक्रेटरी 'लोला' नाम की एक रूसी महिला से मुलाकात हुई। दोनों मे गहरी दोस्ती बाद में विवाह के रुप में खत्म हुई। फलस्वरुप उनके एक लड़का 5 सितम्बर, 1938 में पैदा हुआ। राहुल 34 भाषाओं के ज्ञाता थे। बातचीत में वह संस्कृत और हिन्दी का ही प्रयोग करते

थे। राहुल जी एक गतिशील शख्सियत के मालिक थे। लेखक, कवि राजनीतिक, समाजसेवक, सामाजिक चेतना, भाषा, साहित्य पुराने परम्पराओं के जागरुक, राजनैतिक सोच विचार के रुप में राहुल स्वयं एक संस्था थे। उनकी तालीम को अगर गहराई से देखा जाए तो मानवता की तालीम थी। राहुल घुमक्कड़ तो थे ही यात्रा को वह सच्चाई की खोज समझते थैं उन्होंने संस्कृत और हिन्दी भाषा को बढ़ावा दिया। उन्होंने हिन्दी को अंग्रेजी के स्थान पर ग्रहण करने की प्रेरणा दी।

राहुल जी की मेहनत और अगुवाई के बल पर "हिमालयन बुद्धिस्ट सोसाईटी" 'मनाली कायम हुई, और 1957 को भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं० नेहरु ने मनाली के खूबसूरत सेहत अव्वल मुकाम पर तशरीफ लाए। हिमालयन सोसाईटी के सदस्य ठाकुर मंगल चन्द (अध्यक्ष) के साथ और लाहौल एडवाईज़री कौंसिल के सदस्य नेहरु जी से मिले। और बौद्धों के लिए सराय और मन्दिर स्थापित करने की प्रार्थना की । नेहरु जी ने उस वक्त पंजाब के मुख्यमन्त्री प्रताप सिंह कैरों को आदेश दिया। जिसके परिणामस्वरुप 4 बीघा जमीन मनाली के मध्य दिया गया। जहां एक विशाल मन्दिर स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया। हम जितने भी बुद्धिस्ट है। आज राहुल जी को याद किये बगैर और श्रद्धाजंलि दिये बगैर नहीं रह सकते जिनकी प्रेरणा से इस महत्वपूर्ण संस्था की स्थापना की गई। मन्दिर व सराय के निर्माण के लिए सब मिल जुल कर सहयोग करें, यही हमारी तरफ से उनके लिए सच्ची श्रद्धाजंलि होगी। राहुल जी के लिए इतना कहना ही काफी होगा।

"हजारों वर्ष नरगिस अपनी वे नूरी पर रोती है।
बड़ी मुश्किल से पैदा होते हैं दिदावर चमन में।।"

"मृकुला अभिलेख

यहां देवी की अष्ठ भुजा मूर्ति है। जिसमें एक भुजा वरद मुद्रा में है, दूसरी भुजा से देवी ने महिषासुर की पूंछ पकड़ी हुई है। अन्य छः भुजाओं में शंख, चक्र, त्रिशूल, गदा, वज्र और पाश है। मूर्ति के आधार भाग में देवशेष शारदा लिपि में एक अभिलेख खुदा है। एंटिक्विटीज़ ऑफ चम्बा स्टेट" के पृष्ठ 251 पर डॉ० फोगल ने इस अभिलेख का देव नागरी रुपान्तरण इस प्रकार दिया है।

"ओं ठाकुर महश्री हीम पालन। श्री महादेवी मर्कुल उदी। पिन्नुः पुत्र-पौत्रेण सर्वकाल तिष्ठति देव श्रीयो भवति। तं म शुभ कृत श्री कश्मीर यद वन्त। मारनिरहंण मार्कुल देवी उपनि। ओं स्वस्तिः अस्य देवती री रि मून्या घटापने दी सहस 4645 सोमडिराष्य भद्रावकाषापुरीः पंजमाणक जीणकेन घटिता।"

इस अभिलेख से इतना तो स्पष्ट होता ही है कि मूर्ति का निर्माण भद्रवाह के कारीगर पंजमाणक जीणक ने किया है। त्रिलोकनाथ के ठाकुर हीम पाल ने यह मूर्ति प्रतिष्ठित की। 4645 कलियुग संवत् लगभग ईसा संवत् 1569-70 के समकक्ष बैठता है। यही मूर्ति निर्माण का समय है। यहां के स्थानीय लोग भी बताते हैं कि पहले यहां मूर्ति नहीं थी। देवी के प्रतीक रूप में खप्पर था। यह खप्पर आज भी मूर्ति के पास रखा हुआ है। देवी आज्ञा से खप्पर के सार्वजनिक दर्शन की अनुमति न होने से इसे जनता की दृष्टि से ओझल रखा जाता है।

मूर्ति बौद्धों के अनुसार दोरजे फागमों (भोटी) अथवा वज्रवराही (संस्कृत) की है। हिन्दू इसे महिषासुर मर्दिनी मानते हैं। ये सभी शक्ति के ही रूप हैं।

मन्दिर का निर्माण काल पुरातत्व वेत्ताओं के अनुसार 7वीं-8वीं शताब्दी है। इस के पश्चात् क्रमशः कश्मीर नरेश अनंत देव की महारानी सूर्यमती तथा कुलूत् नरेश बहादुर सिंह (1532-59) ने इस का जीर्णोद्धार किया।

सौजन्य : डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

हिमसत्ता, फरवरी 12, 1995

प्रस्तुति :यू०एफ०ओ०

(अनऑर्थोडॉक्स फिक्स ऑर्गेनाइज़ेशन)

लाहुल अध्याय

हिमालय दर्शन-महान पवित्र दर्शन

श्री एन० जी० बौद्ध के नेतृत्व में लाहौल के साहसी युवा कर्मचारियों द्वारा गठित होली हिमालयन दर्शन अभियान जिसे लाहौल ग्रीन पीस क्लब केलांग तथा जिला प्रशासन लाहुल स्पिति द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित किया गया। यह अभियान Yamaha Rx-100 मोटर साईकलों पर त्रिलोकनाथ (रेपाग) पट्टन घाटी से लामायुरू (लेह) तक की जाएगी। इस अभियान की विशेष बात यह है कि यह दल विश्व के सबसे ऊंचे यातायात खारदूंगला (18383ft.) को पार करेगी। अभियान दल के नेता के अनुसार इस अभियान का मुख्य उद्देश्य लाहुल तथा लेह लद्दाख के पवित्र तीर्थों का दर्शन करना तथा जन-२ तक शान्ति एकता व आपसी भाईचारे का संदेश पहुंचाना है। इस अभियान की विशेष बात यह रहेगी कि यह दल विभिन्न स्थानों में जन-सम्पर्क करेगी व स्थानीय महिला मण्डल, व ग्राम पंचायतों द्वारा इस अभियान दल का स्वागत होगा जिससे आपसी सदभाव बढ़ाने में सहायता मिलेगी। इस अभियान को जिला प्रशासन (लाहुल स्पिति) लाहुल ग्रीन पीस क्लब केलांग, जिला प्रशान (लेह लद्दाख) लाहुल आलू सोसाईटी, लाहुल हॉप सोसाईटी, लाहुल महिला मण्डल संघ, लाहुल ग्रांम पंचायत संघ आदि सफल बनाने में अपना योगदान देंगें।

पौरी

हमेशा की तरह लाहौल-स्पीति का ऐतिहासिक मेला रेबाक्-पौरी इस वर्ष 18 तथा 19 अगस्त को सम्पन्न हुआ। इस वर्ष भीड़ पिछले वर्षों की अपेक्षा ज्यादा रही। इस से लाहौल में सांस्कृतिक क्रान्ति का संकेत मिलता है। लेकिन दुकान छुट-पुट ही दिखाई दिए। विद्युत सम्बन्धी अव्यवस्था से सारा आयोजन खटाई में पड़ गया। 18 की रात सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया जा सका। 19 को जेनेरेटर की मद्द से सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। त्रिलोक नाथ के आस-पास के गांवों से काफी टीमों ने इस कार्यक्रम में भाग लिया और सिन्दवाड़ी की टीम लोक नृत्य में सर्वप्रथम रही। लाहौल-स्पीति के उपायुक्त श्री जे० आर० गाज़टा भी इस अवसर पर मौजूद थे। उन्होंने त्रिलोकनाथ गांव को सर्दियों में हिमस्खलन से सुरक्षित करने के उद्देश्य से चैक डैम निर्माण हेतु 26 लाख रुपये देने की घोषणा की।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि किसी कारणवश ठाकुर कश्मीर सिंह की परम्परागत सवारी इस वर्ष नहीं निकल पाई। पूछताछ करने पर पता चला कि सवारी के लिए घोड़ा उपलब्ध नहीं था। ठाकुर साहब भी मेले में कहीं नज़र नहीं आए। ध्यातव्य है कि ठाकुर बन्धुओं द्वारा मन्दिर प्रबन्ध समिति से एक घोड़ा उपलब्ध कराने की मांग कई सालों से की जाती रही है। जिस पर समिति का रुख नाकारात्मक रहा।

कुल मिला कर इस वर्ष पौरी मैला विरोधाभासों से पूर्ण रहा। जनता ने जितनी ज्यादा दिलचस्पी दिखाई, प्रबन्धक इतने ही ढीले रहे।

शेलकी फेस्टीवल

वर्ष 1995 को जून अन्त में लाहौल कला संगम (रजि०) ने उदयपुर में शेलकी-फोस्टीवल के नाम से एक तीन दिवसीय सांस्कृतिक उत्सव का सफल आयेजन किया। जिसमें विभिन्न महिला-मण्डल एवं युवा-मण्डल के दर्जन भर टीमों ने हिस्सा लिया। उत्सव मे लोक नृत्य, नाटक, समूहगान इत्यादि प्रतियोगिता शामिल की गई। इस आयोजन से लोगों की अपनी सांस्कृतिक विरासतों की ओर दिलचस्पी तो बढ़ी ही साथ ही साथ लाहौल कला संगम ने लाहौल के लब्ध प्रतिष्ठ कलाकारों को पुरस्कारों से सम्मानित कर पुरानी और नई पीढ़ी की सभी कलाकारों का मनोबल बढ़ाया।

हवाई अड्डा बनने की उम्मीद

एयर पोर्ट अथोरिटी ऑफ इन्डिया की ओर से चार सदस्यों का एक सर्वेक्षण दल 24, 25, 26 अगस्त को लाहुल आया। इस दल का उद्देश्य लाहुल में हवाई पट्टी बनाए जा सकने की संभावनाओं का पता लगाना था। इस उद्देश्य से दल ने तीन स्थानों, स्तींगरी, रवालिंग तथा शिपटिंग का दौरा किया।

'ट्राईबल एम्पलॉयज़ यूनियन तथा स्थानीय निवासियों की ओर से इस दल को केलंग तथा उपरोक्त तीन स्थानों पर शानदार स्वागत किया गया। रुखसत के समय दल का रवैया सकारात्मक लगा। उम्मीद की जा रही है कि तीन में से किसी एक स्थान का अनुमोदन मिल ही जाएगा। उल्लेखनीय है कि कुछ वर्ष पूर्व इसी प्रकार के एक सर्वेक्षण दल ने रिवलिंग के लिए नकारात्मक रिपोर्ट दिल्ली भेजी थी।

'ट्राईबल एम्पलॉयज़ यूनियन ने इस दल के यहां भेजने तथा इन के आगमन की पूर्व सूचना के लिए मुख्यमन्त्री तथा मुख्य सचिव का आभार व्यक्त किया।

लाहुल माऊंटेनियरिंग क्लब का सराहनीय पग

सितम्बर के प्रथम सप्ताह में हुई भारी वर्षा के कारण लाहुल का शेष दुनियां से सम्पर्क तो कट ही गया, साथ में घाटी का सम्पर्क भी खत्म हो गया। सभी नालों में बाढ़ आ गई। बहुत से नए नाले बन गए तथा सड़कें भूस्खलन तथा चट्टानों के गिरनें के कारण अवरुद्ध हो गईं। बहुत सारी मिट्टी ढलानों से गिर गिर कर चनाव में बह गई। खोकसर और बारालाचा में कम से कम हजार यात्री फंस गए। लाहौल स्पीति के उपायुक्त श्री गाज़टा भी सपरिवार खोकसर फंसें रहे। बारालाचा में चार फुट बर्फ पड़ी जबकि रोहतांग में तीन चार इंच हिमपात हुआ।

राहत और बचाव कार्यों में जनता की ओर से पूरा सहयोग मिला। "लाहुल माऊंटेनियरिंग क्लब" का एक 22 सदस्यीय बचाव दल बारिश रुकते ही मोटर साईकिलों पर रवाना हुई। लेकिन सड़कें खराब होने के कारण मोटर साईकिलों को बारालाचा से आगे नहीं ले जा सके। बर्फ में फंसें यात्रियों की मदद करते हुए वे लोग बारालाचा और सरचू तक पैदल गए। ज्यादातर यात्री हाई अल्टीच्यूट तथा स्नो ब्लाईंडनैस तथा फ्रॉस्ट बाईट के शिकार हुए थे। मार्ग में उन्हें एक युवती का शव भी मिला जिसे बाद में पुलिस के हवाले किया गया। कुछ टुरिस्ट तथा गद्दी तीन चार दिनों से भूखे प्यासे, मरणासन थे। उन्हें सत्तू, मिनरल वाटर बिस्कुट आदि खिला कर उनकी जानें बचाईं। इस राहत दल के साहसी सदस्यों ने बारालाचा से मेंहदीं नगर तथा लेह की ओर सरचू तक पैदल चलने योग्य रास्ता बनाया और वहां फंसे लोगों को लेह तथा केलंग पहुंचानें में मदद की।

बाढ़ का कहर

चंन्द्रा घाटी में सब से ज्यादा तबाही सिसू तथा खोकसर के बीच मची। इस बीच में पड़ने वाले सभी नालों में भीषण भूस्खलन हुआ। सूत्रों ने बताया कि पागल नाला में चार पांच ट्रक तथा टैंकर मलबे के नीचे दब गए। आस-पास की उपजाऊ भूमि भी पूरी तरह से नष्ट हो गई है। उपायुक्त श्री जे. आर गाज़टा मौसम साफ होने के बाद पैदल खोकसर से केंलंग पहुंचे। इसी बहाने उन्हें लाहुली जनता के दुख दर्द को करीब से देखने का अवसर मिल गया।

पूरी घाटी में बारिश के दौरान तथा उस के बाद भी हफ्तों बिजली बन्द रही। थिरोट जल विद्युत परियोजना का जलाशय सिल्ट से भर गया था। मनाली के साथ टेलीफोन सम्पर्क महीनों से बन्द है। कुल्लू तथा अन्य जगहों के लिए भी लाईनें अनियमित रहती है। डाक सेवा अस्त व्यस्त है। सरकारी चिट्ठियां अभी भी समय पर नहीं पहुंच रही हैं। हि. परिवहन की बसें कइ दिनों तक वर्क शॉप में खड़ी रहीं; जबकि केलंग से दालंग तथा चेहनाला तक सड़कें मौसम साफ होने के शीघ्र बाद खोल दी गईं थी। इसमें कोइ शक नहीं कि कुल्लू के मुकाबले लाहुल में जान माल की खास हानि नहीं हुई, लेकिन जनता को ज़बरदस्त हताशा तथा मानसिक यन्त्रणा के दौर से गुज़रना पड़ रहा है। अभी तक पूरे लाहौल का आलू रोहतांग के पार पड़ा है। हालांकि अस्थाई तौर पर मार्ग बांग तक खोल दिया गया है। फिर भी मौसम का क्या भरोसा? देर से बीजा हुआ मटर लाहौल मे सड़ रहा है। कोई व्यापारी उसे खरीदने को तैयार नही। मुख्यमन्त्री ने बीज खरीदने की सांत्वना तो दी है लेकिन मटर खेत में ही सड़ रहा है। उस के बीज बनने की संभावनाएं नज़र नहीं आती। सर्दियों के लिए ईंधन, राशन, और अन्य आवश्यक वस्तुओं का जुगाड़ करना बाकी है। कुल्लू से जाने वाली विद्युत लाईनें ध्वस्त हो गईं हैं।

हि.प्र० क्रिकेट एसोशिएशन के नए अध्यक्ष

जिला लाहुल स्पिति क्रिकेट कमेटी के जनरल सेक्रेटरी श्री रघुवीर सिंह ठाकुर को हिमाचल प्रदेश क्रिकेट एसोशिएशन का अध्यक्ष चुना गया। इस बात से लाहुल स्पिति व कुल्लू के क्रिकेट खिलाड़ी उनसे इन जिलों में क्रिकेट के उत्थान की काफी उम्मीद कर रहें हैं।

लाहुल में कालेज का खुलना

लाहुल में उदयपुर के पास कुकुमसेरी में नया कॉलेज खुला जिसके लिए कुल्लू से अर्थशास्त्र के प्राध्यापक श्री बी.एन. ठाकुर को प्रिंसीपल बना कर भेजा गया है। अभी तक इस कॉलेज में कुल 6 ही विद्यार्थी दाखिल हुए हैं और पढ़ने व पढ़ाने वालों की संख्या बराबर बताई जा रही है।

पहेलियों के उत्तर

(20) हड़ = हल (17) भुत्पा = धोंकनी (14) चिम्टा = चिम्टा (11) चेब् = सुई (8) टी०बी० (5) रात (2) शेनवुटा = वेली-वृक्ष (12) बर्फ का पिघलना (1) एके = सूर्य (21) बरसात का मौसम (13) बिजली (3) तकली (22) गैस चुल्हा (4) मूली (18) कलम (15) जटुम = द्राती (10) तिन् = नाखुन (7) सञ्ज्वा = दीपक-तेल, बत्ती सहित (16) तारों भरा आसमान (19) गाड़ी (6) कलम (9) मक्की का भुट्टा।

जब धार्मिक विश्वास में चमत्कार हुआ।

एन० जी० बौद्ध

समस्त लाहौल घाटी में पिछले कई दिनों से पैट्रोल की सख्त कमी थी। लाहौल का एक मात्र पैट्रोल पम्प सूखा पड़ा हुआ था। ऐसे मौके पर मोटर साईकिलों पर कोई अभियान चलाना एकदम असम्भव था। लेकिन एक धार्मिक अभियान "होली हिमालयन दर्शन अभियान'' जो समस्त प्रदेश में अति लोकप्रिय हो गया था, को स्थगित करना भी एक अपशकुन था। अभियान का सारा प्रबन्ध कर लिया गया था। यदि यह असफल या स्थगित हो जाता तो काफी नुकसान भी हो सकता था। मेरे ऊपर बहुत बड़ी जिम्मेवारी थी। एक बुद्धिस्ट होने के नाते मैं यह धार्मिक अभियान किसी भी सूरत में स्थगित या असफल देखना नहीं चाहता था। जब अभियान को कूच करने में मात्र एक दिन रह गया तो इस अभियान को एक और कड़ी परीक्षा से गुज़रना पड़ा। इसके कुछ सदस्यों ने अन्तिम क्षणों में अपना नाम वापिस ले लिया और कुछ ने तो अन्त तक असमंजस में रखा। मेरे लिए एक नई समस्या पैदा हो गई। एक कड़ी चुनौती सामने खड़ी हो गई थी। क्योंकि लोगों नें इस अभियान को राजनैतिक रुप दे दिया था। मैने अपना धार्मिक विश्वास, साहस, संयम व लग्न नहीं छोड़ा। मुझे पवित्र हिमालय के देवी देवताओं पर पूरा विश्वास था कि यह अभियान कभी भी असफल या स्थगित नहीं होगा। लेकिन एक ऐसा चमत्कार हुआ कि हम केवल नौ ही सदस्य रह गए। यह नौ सदस्य सचमुच इस महान अभियान के नौ रत्न के समान साबित हुए और सारी समस्याऐं स्वत: हल होती गई।

"होली हिमालयन दर्शन अभियान'' इस अभियान को मैने अनेक दृष्टि से सोच कर हिमालय को महत्व को ध्यान में रखते हुए जन मानस आकृर्षित करने के लिए बहु उद्देशीय लक्ष्य को मध्य नज़र रखते हुए गठित किया है। क्योंकि मुझे प्रारम्भ से ही हिमालय के प्रति एक गहरा लगाव रहा है। जब पर्यावरण की समस्या ने समस्त दुनिया को आतंकित कर दिया तो मेरा रुझान हिमालय के प्रति और भी गहरा होता गया। मैनें हिमालयन क्षेत्र में पर्यावरण विकास व इसकी पारिस्थितिक सन्तुलन के लिए अनेक ऐच्छिक कदम उठाए। इस विषय पर लोगों में क्रान्ति लाने हेतू मैने अखबारों में लेख लिखने शुरु किये। पद यात्राएं आयोजित किये। मोटर साईकिलों पर रैली आयोजित किये। मेरा एक अभियान "हिमालयन ग्रीन पीस एक्सपीडीशन'' अगस्त, 1992 (शिमला से लेह) काफी सफल रहा। मैं जहां भी जाता हूं पर्यावरण विकास से सम्बन्धित कोई न कोई कार्यक्रम आयोजित कर देता हूं। अन्तर्राष्ट्रीय "ग्रीन पीस'' की भान्ति एक बहुत बड़ा एच्छिक संस्थान "हिमालयन ग्रीन पीस'' के गठन बारे अभियान चलाना चाहता हूं। होली हिमालयन दर्शन अभियान भी ठीक इसी का एक रुप है। इस बहु उद्देशीय अभियान में धार्मिक जागरुकता, पर्यावरण विकास व राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता से सम्बधिन्त एक अद्वितीय व महान अभियान का रुप दर्शाया है। इस अभियान के प्रथम दौर में यह शान्ति, एकता व भाईचारे का सन्देश पहुंचाते हुए, त्रिलोकनाथ से लामायुरु फिर नूबराह तक चलाना था। इतने महान अभियान को आयोजित करने के लिए सबसे बड़ी समस्या धन की थी। इसमें कम से कम मेरे आकलन के अनुसार 50 हजार की बड़ी राशि की जरुरत थी। मैंने प्रायोजकों के लिए दौड़ धूप शुरु किए और मुझे सर्वप्रथम केलांग जिला मुख्यालय का सबसे बेहतरीन व प्रतिष्ठित होटल-"होटल देकिद'' की ओर से एक उल्लेखनीय सहयोग मिलने में सफलता मिली। इस होटल ने उद्घाटन समारोह व समापन समारोह दोनों आयोजित करने के लिए एक मुख्य प्रायोजक के रुप में अपनी स्वीकृति प्रदान किए। उसके पश्चात लाहौल के सबसे अग्रणी व लोकप्रिय सोसाईटी "लाहौल आलू उत्पादक सहकारी सभा'' तथा लाहौल के दूसरे नम्बर के सबसे लोकप्रिय सोसाईटी "हॉप्स सोसाईटी'' दोनों ने पांच-पांच हजार रुपये की राशि इस महान अभियान के लिए अनुदान के रुप में प्रदान किए। अब लगभग पचीस फीसदी बजट का प्रबन्ध हो गया तो दूसरी समस्या थी मोटर साईकिलों की रख रखाव व इसके लिए जरुरत पड़ने वाली स्पेयर पार्टस तथा टायर टयूब की सबसे अहम व अत्यन्त जरुरी सामान वह था। इसके लिए मैंने एसकोर्टस कम्पनी से पत्राचार किए क्योंकि हम इस अभियान में उस कम्पनी का ही मोटर साईकिल "यामाहा'' आर.एक्स. 100 इस्तेमाल कर रहे थे। अन्त में हमें वहां से भी मन्जूरी मिल गई। अब सारा प्रबन्ध हो जाने के बाद मैने अभियान के मूल उद्देश्य को जनप्रिय बनाने व जनजन तक पहुंचाने के लिए पोस्टरज़ बैनरज़ व ट्रैक सूटस पर उद्देश्य लिखने आदि का काम भी बहुत जल्द कर दिया। इस अभियान में चमत्कारिक रुप से जब नौ ही सदस्य चयनित हुए तो मैने सभी सदस्यों की एक आम बैठक बुलाई। इस बैठक में मैने सदस्यों को उनकी अपनी कार्यकुशलता, अनुभव व योग्यताओं के अनुसार कार्यभार सौंप दिये।

1.	श्री एन.जी.बौद्ध	(कनिष्ठ अभियन्ता विद्युत)	दल नेता
2.	श्री नोरबू पॉस	(प्रधान ग्राम पंचायत)	टीम का एक वरिष्ठ सदस्य व मुख्य तकनीकी सलाहाकार
3.	श्री उद्ज्ञान छेरिंग	(जिला लाईब्रेरियन)	उप नेता व लायजन अधिकारी
4.	श्री प्रेमनाथ मासूम	(निरीक्षक, सोसाईटी)	कैंपिग विभाग
5.	श्री बलबीर	(पंचायत सचिव)	कैंपिग विभाग
6.	श्री राजेश चौहान	(कनिष्ठ टेलीकॉम अधिकारी)	यांत्रिकी विभाग
7.	श्री महेश राणा	(कनिष्ठ अभियन्ता पी. डब्ल्यू. डी.)	यान्त्रिकी विभाग
8.	श्री रघुबीर	(कानूनगो)	कोषाध्यक्ष
9.	श्री सुरेन्द्र	(पुलिस कॉन्सटेबल)	अभियान सहायक

सभी सदस्यों ने अपनी अपनी योग्यता, कार्यकुशलता व अनुभव का जौहर दिखाते हुए अभियान को बड़ी कुशलता से संभाल लिया था।

4 जुलाई, 1995 का दिन हमारे इस ऐतिहासिक अभियान के लिए सबसे अहम व शुभ दिन था। हम लोग पूरी तैयारी के साथ अपने अपने ट्रैक सूटस पहन कर सामान आदि अच्छी प्रकार से बांध कर प्रसिद्ध ऐतिहासिक मन्दिर त्रिलोकनाथ के दर्शन व पूजा पाठ करने के बाद पवित्र लामाओं से बौद्धिक प्रणाली द्वारा शुभारम्भ करके जयकार के साथ त्रिलोकनाथ से इस महान व बड़ी चुनौतीपूर्ण अभियान के लिए चल पड़े। मार्ग में हमें शान्शा, कीरतिंग, लोट आदि स्थानों में स्थानीय लोगों का प्यार, सम्मान व हार्दिक स्वागत मिला। इन लोगों ने भावभीनी विदाई के बीच अपनी शुभकामनाएं दिये। जहां सभी सदस्यों के मन में उमंग, साहस व अभियान के प्रति दृढ़ संकल्प था, वहां सबके मन में एक ही चिन्ता थी कि यदि केलांग में पेट्रोल का प्रबन्ध नहीं हुआ तो आगे क्या होगा।

हम लोग करीब 12 बजे केलांग पहुंचे। जब हमारी सुसज्जित मोटर साईकिलों की लम्बी रैली केलांग के तंग बाजार से होकर गुज़र रही थी तो लोग आश्चर्य चकित होकर देख रहे थे। क्योंकि इतना महान अभियान इससे पहले कभी भी नहीं हुआ था। जिला स्टेडियम पहुंचे तो विद्युत कनिष्ठ अभियन्ता संघ की केलांग ईकाई ने हमारा भव्य स्वागत किया। उन्होनें हमें हमारे अभियान की बहुत लम्बी व कठिन यात्रा की संस्मरण लिखने हेतु एक डायरी व पैन भेंट किए। इसके पश्चात हम लोग एक लम्बीं भीड़ के बीच होटल देकिद की ओर बढ़े। होटल देकिद का बाहरी प्रांगण व मुख्य द्वार बहुत ही अच्छा सजाया हुआ था। स्थानीय लोकप्रिय क्लब लायुल ग्रीन पीस क्लब केलांग, महिला मण्डल लोअर केलांग तथा होटल देकिद प्रबन्ध निर्देशक श्री नावांग बरोंगपा ने हमारा बहुत ही शानदार व परम्परागत स्वागत किए। इसके बाद होटल देकिद में दोपहर के भोजन का आयोजित किया हुआ था। स्वागत समारोह के मुख्य अतिथि माननीय जिलाधीश महोदय केलंग से अभियान दल के सदस्यों से परिचय कराया गया। ठीक 2 बजे हम लोग फिर जिला स्टेडियम पहुंच गए जहां पर जिलाधीश महोदय ने इस अभियान को हरी झण्डी दिखाकर रवाना करना था। यहां भी होटल देकिद ने बहुत अच्छा प्रबन्ध किया हुआ था। स्टेडियम में काफी मात्रा में दर्शक मौजूद थे। समस्त जिला अधिकारी गण मौजूद थे। जिला प्रशासन ने इस अभियान दल का मनोबल व साहस बढ़ानें के लिए 2000/- रुपये की राशि अनुदान के रुप में भेंट किए। लाहौल की परम्परा अनुसार पवित्र लामा द्वारा मन्त्र पाठ किए जाने के बाद जिलाधीश महोदय ने हरी झण्डी दिखाकर हमें अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए शुभ कामनाओं सहित विदाई दी।

ठीक 3 बजे जिस्पा स्थित प्रसिद्ध पवित्र काल चक्र परिसर में स्थानीय महिला मण्डलों द्वारा इस दल का फिर से हार्दिक स्वागत हुआ। हमें उस रात दारचा में ही ठहरना पड़ा।

अगले दिन 5.7.95 को हम लोग सबेरे 7 बजे तैयार होकर अपने अभियान के सबसे कठिन व लम्बी यात्रा में हमें तीन दर्रा बारालाचा (16072 फुंट) लोंगलचा (17150)

फुट) व तांगलङलचा (17582 फुट) को पार करके करीब 331 किलामीटर लम्बीं यात्रा करनी थी। हमारे पास केवल सरचू तक ही पैट्रोल उपलब्ध था। लेकिन जब आगे बढ़ते गए तो हमारी सबसे बड़ी समस्या भी स्वत: हल हो गई। बारालाचा के पास हमें एक गाड़ी वाले फरिश्ते ने 20 लीटर का जेरी केन मुफ्त भेंट की। यह सब कुछ चमत्कार ही कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं है। सारे सदस्य हैरान रह गए। अब हमें पैट्रोल की कोई चिंता नहीं थी। हम लोग आराम से लेह पहुंच सकते थे। काफी कठिन यात्रा के बाद हम लोग 4-50 बजे विश्व के दूसरे नम्बर के ऊंचाई वाला यातायात दर्रा तागलांगला (17582 फुट) पहुंचे तो हमारे कुछ सदस्यों काफी थक गए थे। अभी हमें यहां से 105 किलोमीटर और यात्रा करनी थी। यहां करीब आधा घण्टा विश्राम करने के बाद हम लोग अब एक उतराई की ओर आ गए थे। मोटर साईकिल में उतराई वाला सफर कच्चे सड़क पर ज्यादा कष्टदायक होता है। हम लोगों की सपीड पहले से काफी घट गई थी। हम लोग 7.15 बजें पहला गांव रुपशो पहुंचे। यहां हम लोंगों का स्थानीय लोगों ने काफी लम्बे इन्तज़ार करने के बावजूद भी हार्दिक स्वागत किया। अपने कार्यक्रम के अनुसार हमने यहां 12 बजे पहुंचना था। इसके बाद हम लोगों को उस रात रूपशो में ही गुजारना पड़ा। क्योंकि सभी सदस्य लगभग थक गये थे। यहां से लेह करीब 56 कि०मी० और था।

अगले दिन 6.7.95 को हम लोग 10 बजे ही लेह पहुंच गए। यहां हमने होटल ज़ाम्बाला में कमरा लिया और सामान आदि खोल कर तनिक विश्राम किया। हमारे ज़ाम्बाला पहुंचते ही लद्दाख बुद्धिस्ट एशोसिएशन के सदस्य आए और उन्होने हमें बताया कि उन्होने यहां भी स्वागत समारोह का आयोजन किया था। उन्होंने हमारा 7 बजे तक इन्तज़ार किया। लेकिन हम लोग मज़बूर थे। हमने उनसे अपनी मजबूरी बताई और इन्तजार व इन्तजाम के लिए क्षमा मांगी। उन्होंने हमें पुन: चाय पर बुलाने के लिए समय मांगा जिसे हमने नूबराह-लामायुरु जाने के बाद ही रखा था। हमने उस दिन करीब 11 बजे तक जिलाधीश कार्यालय से नूबराह के लिए परमिट आदि तैयार किए और श्री सोनम बरोंगपा (ओन्बो हाडवियर स्टोर लेह) की सौजन्य से एक बढ़िया ब्रेकफास्ट किया लेह से करीब 11.30 बजे चलने के बाद हम लोग सबसे कठिन चढ़ाई वाला, अत्यन्त दुर्गम कच्चा रास्ते को तय करके विश्व के सबसे ऊंचे यातायात दर्रा खारदूंगला (18383 फुट) करीब 2.15 बजे पहुंचे। यहां हम लोगों ने अपनी अभियान की विजय की खुशी मनाई। यहां हम लोगों ने करीब एक घण्टा बिताया। हिमांक परियोजना (ग्रुप) की ओर से यहां मुफ्त चाय व स्नेक्स मिलता है। बर्फ के ऊपर खेलते रहे। अपनी अपनी गाड़ियों को सब लोग चूम रहे थे। सचमुच 100 सी०सी० में केवल यामाहा के सिवाए कोई दूसरा और टू-व्हीलर नहीं पहुंच सकता हैं। हम सब लोगो ने श्री उरज्ञान छेरिंग उपनेता को बधाई दी क्योंकि उन्होने अपनी गाड़ी HIF-42 को दूसरी बार खारदूंगला पहुंचाया था।

करीब 4 बजे यहां से हम अब नुबरा के लिए रवाना हुए। अभी यहां से हमें नुबराह घाटी का मुख्यालय दिस्केद तक 72 कि०मी० और सफर तय करना था। जैसे-जैसे हम लोग आगे बढ़ते गए वैसे-वैसे आगे का इलाका सुन्दर दिखाई देने लगा। जैसे हम लोग 7 बजे दिस्किद पहुंचे तो ऐसा लगा जैसे हम लोग स्वर्ग पहुंच गए हों। चारों ओर घनी हरियाली व एकदम मैदान और बीच में एक सुन्दर नदी का दृश्य बहुत ही आकर्षक दिखाई देता है। यहां भी हम लोगों का रहने का इन्तज़ाम बहुत ही आसानी से हो गया। एक गैस्ट हाउस में बहुत बढ़िया विस्तर व खाना मिला। यह सब एस० एच० ओ० नूबराह के महान सहयोग से हुआ। अगले दिन 7.7.95 को थोड़ा साईट सीन करने के बाद हम लोग पुन: लेह के लिए रवाना हुए। उस दिन हम लोगों ने लेह में पूरा विश्राम किया। 8.7.95 को हम लोग लामायुरु के लिए रवाना हुए। लामायुरु जाते हुए हम लोग सिन्धु नदी के साथ-साथ श्रीनगर की ओर बढ़ते जाते है। लामायुरु पहुंच कर जब हम लोगों ने पवित्र मन्दिर के दर्शन किए तो हम लोग सभी हैरान रह गए। इतना पुराना मन्दिर करीब 9 वीं शताब्दी का लिखा था। मन्दिर के अन्दर-बाहिर बहुत बढ़िया सफाई है। श्रद्धालुओं की बहुत बड़ी भीड़, श्रद्धालुओं को मुफ्त चाय सेवा, कुल मिलाकर दिल में छाप छोड़ने वाला प्रबन्ध व मन्दिर है वहां लामायुरु से पुन: हम लोग लेह करीब 6 बजे पहुंचें। हमने उस दिन 255 कि०मी० सफर किया।

9.7.95 को हमने लेह लोकल यात्रा किया। लेह स्थित शान्ति स्तूप जिसे जापानी लामाओं ने तीन साल में बनवाया था और करीब 1½ करोड़ रुपये का खर्च हुआ था। यह स्तूप जिसमें महात्मा बुद्ध की पूरी जीवनी पूरे स्तूप के चारों ओर खुदवाई है सचमुच बहुत ही आकर्षक व आश्चर्य चकित कर देने वाला है। इसके बाद हम लोग ऐतिहासिक महल स्तोग पैलेस देखने गए। यहां वर्तमान महारानी व उनके स्वर्गीय महाराजा की एक अविस्मरणीय दास्तान, रहन-सहन, पहनावा आदि अन्य घटनाएं बिल्कुल सुरक्षित रुप से सजा कर रखी है। यहां सचमुच हैरत अंगेज चीज़ देखने को मिलती है। यहां से हम लोग ठिगसे, शेह आदि मन्दिरों के दर्शन के लिए गए।

10.7.95 को लेह स्थित लद्दाख बुद्धिस्ट एशोसियशन के कार्यलय में एशोसियशन

के प्रधान ने हमारे सम्मान में एक भव्य स्वागत किया, चाय जलपान का आयोजन किया। यहां हम लोगों ने अपना परिचय दिया और एशोसियशन के महा सचिव ने हमारा स्वॉग से स्वागत किया। लद्दाख बुद्धिस्ट ऐशोसियशन के प्रधान ने अपने स्वागत भाषण में हमारे अभियान की महान उद्देश्य की प्रशंसा की तथा इसकी सपन्नता के लिए अपनी शुभकामनाएं दी। यहां से विदा लेने के बाद हम लोग पुन: कैम्प मे आए और अपने सामान की पैकिंग में जुट गए। सारे सदस्य इतने अच्छे माहौल में, एक जुट होकर, टीम भावना से अपनी वापसी यात्रा की तैयारी में लगे हुए थे। ठीक 2 बजे हम लोग लंच करके वापसी यात्री की ओर प्रस्थान हुए मार्ग में लोग हमें हाथ हिला-हिला कर विदा दे रहे थे। उस रात हम लोगों को पांग में ठहरना था।

11.7.95 का दिन हमारे लिए बहुत बड़ा अहम दिन था। क्योंकि आज के दिन हम लोग अपने इस महान अभियान को सफल बनाकर, अपने उद्देश्य को पूर्ण करके पुन: केलांग लौट रहे थे। सभी सदस्यों के चेहरे पर विजयी मुस्कान साफ नज़र आ रही थी। सब लोग बहुत खुश थे। क्योंकि इस महान अभियान को सफल बनाने में सभी सदस्यों ने उल्लेखनीय भूमिकाएं अदा की थी। सभी सदस्य इस महान विजयश्री के हकदार थे। इसका सारा श्रेय सभी सदस्यों को बराबर मिलेगा। जब हम लोग बारालाचा दर्रा पार करके दारचा पहुंचे तो हमारे कुछेक सदस्य सचमुच भावुक दिखाई देने लगे थे। ऐसे मौके पर एक महान सफलता को हासिल करके अपने घर लौटना किसी का भी मन अत्यन्त खुशी में जज़बाती व भावाभिभूत होना स्वाभाविक है।

ठीक 6 बजे केलांग पहुंचे और जिला स्टेडियम में लोगों की बहुत बड़ी भीड़ हम लोगों के स्वागत के लिए मौजूद थी। जब मैंने मोटर साईकिल से उतर कर अपना पैर ज़मीन पर रखा तो सचमुच मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे मैं हवा में तैर रहा हूं। चारों ओर से बधाईयों की बरसात हो रही थी। जैसे-जैसे हम लोग होटल देकिद की आरे बढ़ते गए वैसे-वैसे शरीर के रोंगटे खड़े होने शुरु हो गए। होटल देकिद ने समापन समारोह का भी बहुत बढ़िया प्रबन्ध किया था। करीब करीब समस्त ज़िला अधिकारी गण मौजूद थे। समापन समारोह के मुख्य अतिथि माननीय जिलाधीश महोदय ने हमारा भव्य स्वागत किया। मैंने अपने अभियान दल की ओर से जिलाधीश महोदय व होटल देकिद के प्रबन्ध निदेशक को लेह लद्दाख से लाया स्वॉग भेंट करके उनकी बधाईयों का धन्यवाद किया। होटल देकिद द्वारा आयोजित अभियान दल के सफलतापूर्ण पहुंचने के सम्मान में एक शानदार डिनर के पश्चात मैनें अपनी अभियान दल की उपलब्धियां, अनुभव व सफलता का मुख्य अतिथि से अक्षरश: वर्णन किया तथा मैंने अपने अभियान दल की तरफ से उन सभी लोगों का अपने प्रायोजकों का, जिला प्रशासन का, महिला मण्डलों का धन्यवाद किया, जिन्होनें इस अभियान को सफल बनाने के लिए अपना महान सहयोग प्रदान किया।

हमने इस अभियान में कुल 1782 कि०मी० सफर किया और इस अभियान में कुल 25675/- रुपये व्यय हुए। इस अभियान में 6 यामाहा आर.एक्स. 100 मोटर साईकिल प्रयोग किए गए, जिनमें से किसी ने भी किसी किस्म की समस्या पैदा नहीं होने दी। बावजूद इतने कठिन व लम्बी यात्रा के लिए मैं एस्कोर्टस कम्पनी को बधाई देता हूं।

अन्त में मैं, अपने अभियान दल की ओर एक बार फिर अपने प्रायोजकों का इस अभियान के आयोजकों का विशेषकर होटल देकिद का जिसने इस अभियान की महानता व गरिमा को ऊँचा रखने के लिए व इसे सफल बनाने के लिए कोई भी कसर नहीं छोड़ी उनका मैं बहुत-बहुत आभारी हूं। इस अभियान की सफलता के लिए इनके महान सहयोग को यह दल हमेशा याद रखेगा।

इस अभियान में फिर मिलेंगे।

जय हिमालय - जय भारत ।

अपील

गत अंकों के सम्पादकीय में हम ने लिखा था कि 'मतान्तर' शीर्षक से उपलब्धता पर आधारित एक कॉलम आरम्भ करना चाहते हैं। जिस में 'चन्द्रताल' में प्रकाशित किसी भी लेख आदि से भिन्न अथवा विपरीत मत को स्थान दिया जाएगा। पाठकगण व विद्वज्जन यदि इस प्रकार का मत वैभिन्य रखते हों तो उक्त कॉलम के लिए लिख कर पंजीकृत पत्र द्वारा भेजें। हां, इस बात का अवश्य ध्यान रहे कि आप जो भी लिखे वह पूर्वाग्रह व व्यक्तिगत आक्षेप रहित, स्वस्थ एवं स्टीक हो।

सम्पादक।

"शब्दों का क्या भाव समझिए"

न जाने वास्तविक घटना है या मात्र गप, घटना लाहौल से सम्बन्धित है। घटना इस प्रकार है- एक बुजुर्ग बेचारा अनपढ़ किसी नाले के किनारे वेली के डालियों (रिड़ी) काट रहा था। सर्दी का मौसम, ज़मीन पर काफी बर्फ थी। जब वह डालियां काट रहा था उसने देखा नीचे नाले में कुछ लोग जा रहे थे। इतने में हिम स्खलन हो गया। जब हिम स्खलन थम गया तो देखा नाले में कोई नहीं था। जब पुलिस में ब्यान के लिए उस बुजुर्ग को बुलाया गया तो घटना का पूरा विवरण वह चार लाईनों में इस प्रकार करता है- पहले काटा

फिर दिर-दिर-दिर

फिर मैं ने फियुकारा आया

बाद में है कि० हैं कि है कि हैं ही नहीं।

उस का कहने का भाव था- "पहले काटा" यानि पहले हिम खण्ड ऊपर से कटा, "फिर दिर-दिर-दिर" हिम खण्ड नीचे खिसकने पर आवाज हुई "फिर मैं ने फिथुकारा आया" नीचे लोगो को जाते हुए देख चुका था अत: हिम खण्ड के बारे में बताने के लिए सीटी बजाई, "बाद में है कि है कि है ही नहीं" जब हिम स्खलन शांत हुआ नीचे देखा तो उन लोगों का कोई पता नहीं था पता नहीं सभी दब गए या क्या हुआ क्योंकि नाले में कोई दिखाई नहीं दे रहा था।

डॉ० रंजीत वैद

थोड़ा हँस लो

प्रभावशाली

सेठ जी आपने उस सेल्स गर्ल को क्यों निकाल दिया वह तो बहुत योग्य और फुर्तीली थी।

सेठजी ने कहा- क्यों न निकालता? मैंने कानों से सुना एक ग्राहक उससे कह रहा था कि इस दुकान की दवा से ज़्यादा प्रभावशाली तुम्हारी मुस्कान है जिसे देखते ही हर तकलीफ दूर हो जाती है।

धन्यवाद

एक कम्पनी के मालिक ने अपने मज़दूरों को पुरुस्कार देने के लिए एक समारोह का आयोजन किया। उसने अपने भाषण में कहा-मैं आज आपको यह बताने आया हूं कि हमारी कम्पनी मेहनती और ईमानदार मज़दूरों को किस प्रकार उन्नति देती है। यह व्यक्ति जो हमारे सामने खड़ा है इसे कम्पनी में आए हुए एक वर्ष भी नहीं बीता और इतने कम समय में इसकी तनख्वाह 3000 रुपये प्रतिमाह तम पहुंच गई। मैं इसके काम से बहुत खुश हूं। मुझे यह बताते हुए बहुत खुशी हो रही है कि आज इन्हें हमारी कम्पनी का मैनेजर बनाया जा रहा है और इनकी तनख्वाह पांच हजार रुपये की जा रही है। मैं इन्हें अपनी कम्पनी की ओर से बधाई देता हूं।

वह व्यक्ति आगे बढ़ा और कम्पनी के मालिक से हाथ मिलाकर बोला-धन्यवाद पिताजी।

सर्कस का चीता

एक मोटी महिला दौड़ती हुई आई और अपने पति से कहने लगी एक चीता सर्कस से भाग निकला है।

पति ने कहा-तुम क्यों डरती हो? चीता कोई क्रेन लेकर थोड़े ही आएगा।

नशा

एक आदमी नशे में भैंस से टकरा गया और बोला- माफ करना बहनजी, गलती हो गई। इस पर दूसरे ने कहा-अबे यह तो भैंस थीं। यह सुनकर शराबी ने कहा-अच्छा आगे से ध्यान रखूंगा।

थोड़ी दूर चलकर वह एक मोटी औरत से टकरा गया औ बोला-लोग न जाने क्यों इन भैंसों को सड़कों पर खुला छोड़ देते हैं।

शहनाई की धुन

शादी पर शहनाई बज रही थी। पत्नी ने पति से पूछा-"यह कौन सी धुन बज रही है?" पति बोला-"वही जो तूफान आने से पहले बजाई जाती है।"

लाहुल स्पीति लोक कला, साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड

जैसा कि सभी को विदित है कि स्वंगला एरतोग, लाहुल स्पीति की कला, साहित्य व संस्कृति उत्थान हेतु एक रजिस्टर्ड सोसाईटी है। जो सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट, **21, 1860** के अर्न्तगत रजि० संख्या ल स/**42/93** जिला मुख्यालय केलंग में रजि० है। जैसा आप सभी जानते हैं कि ये लाभ रहित व स्वैच्छिक संस्था है और लाहुल स्पीति के लुप्त हो रही लोक कला साहित्य व संस्कृति के संरक्षण और उसे पुर्नजीवित करने मे लगी है इस पुनीत कार्य में समाज के सभी लोगो से निवेदन है कि अपनी यथा शक्ति के अनुसार योगदान दें। इस अंक से हम लाहुल स्पीति लोक कला, साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड के तहत सभी दानी सज्जनों का नाम, दान और जमा खर्चे का लेखा जोखा देने जा रहे हैं और यह स्थाई रूप से हर अंक में दिया जाएगा।

क्र० नाम	राशि
1. श्री किशन चन्द होटल सम्राट मनाली	1000-00
2. श्री सोम देव शाशनी होटल सिडार मनाली	500-00
कुल योग	1500-00

अध्यक्ष फण्ड कमेटी

लाहुल स्पीति लोक कला, साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड

Best name in
Luxury Travel Service

Bus Service to :

Leh Ladakh
Kaza Spiti
Keylong, Lahaul
Kinnaur
Shimla
Dharamsàla
Delhi
Kathmandu, Nepal

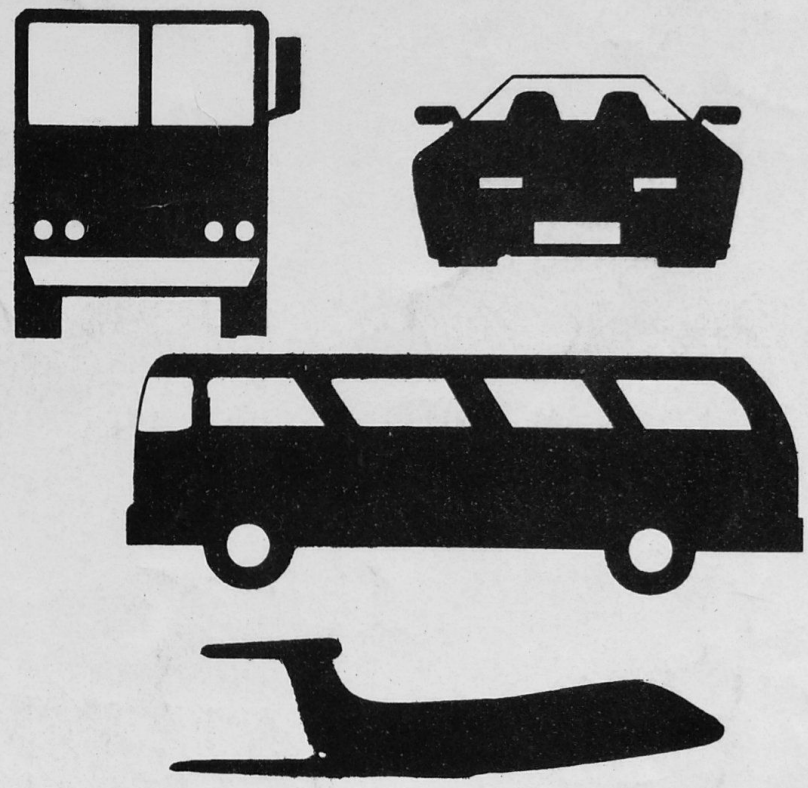

GIAPO TRAVELS

19, Model Town, Manali,
Distt. Kullu-175131(H.P.)
Phone : 2589, 2282

स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिए सतीश कुमार लोप्पा द्वारा मॉड्रन स्टेशनर्ज दुकान न० ५, शंकन गार्डन, मण्डी द्वारा लेज़र टाईप सैटिंग व मुद्रित